BAMI(N)-350

भारतीय शास्त्रीय संगीत का प्रगत अध्ययन – स्वरवाद्य एवं प्रयोगात्मक
कोर एलेक्टिव–षष्ठम सेमेस्टर

संगीत– स्वरवाद्य में स्नातक (बी0ए0)

संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग
मानविकी विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

BAMI(N)-350

भारतीय शास्त्रीय संगीत का प्रगत अध्ययन –
स्वरवाद्य एवं प्रयोगात्मक
संगीत– स्वरवाद्य में स्नातक (बी0ए0)– षष्ठम सेमेस्टर
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग
मानविकी विद्याशाखा

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
तीनपानी बाईपास रोड, ट्रान्सपोर्ट नगर के पीछे,
हल्द्वानी – 263139
फोन नं0 : 05946–286000 / 01 / 02
फैक्स नं0 : 05946–264232,
टोल फ्री नं0 : 18001804025
ई–मेल : **info@uou.ac.in**
वेबसाईट : **www.uou.ac.in**

अध्ययन समिति

अध्यक्ष
कुलपति
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

संयोजक
निदेशक
मानविकी विद्याशाखा,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रो0 पंकजमाला शर्मा(स.)
पूर्व विभागाध्यक्ष–संगीत विभाग
पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़

डॉ0 विजय कृष्ण(स.)
पूर्व विभागाध्यक्ष–संगीत विभाग
कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल

डॉ0 मल्लिका बैनर्जी(स.)
संगीत विभाग,
इग्नू, दिल्ली

श्री प्रदीप कुमार(स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 द्विजेश उपाध्याय(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 जगमोहन परगांई(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 अशोक चन्द्र टम्टा(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 प्रकाश चन्द्र आर्या(आ.स.)
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

पाठ्यक्रम संयोजन

श्री प्रदीप कुमार
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 द्विजेश उपाध्याय
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 जगमोहन परगांई
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 अशोक चन्द्र टम्टा
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 प्रकाश चन्द्र आर्या
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय,
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रूफ रिडिंग एवं फार्मेटिंग

श्री प्रदीप कुमार
संगीत, नृत्य एवं कला प्रदर्शन विभाग,
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

इकाई लेखन

1.	डॉ0 महेश पांडे/ श्री प्रदीप कुमार	इकाई 1
2.	श्री प्रदीप कुमार	इकाई 2
3.	डॉ० विजय कृष्ण/जगमोहन परगाई	इकाई 3,4
4.	डॉ निर्मला जोशी	इकाई 5
5.	डॉ अशोक चन्द्र टम्टा	इकाई 6

कापीराइट	: @उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
संस्करण	: सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति
प्रकाशन वर्ष	: जनवरी 2026
प्रकाशक	: उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल–263139
ई–मेल	: books@uou.ac.in

नोट – इस पुस्तक की समस्त इकाईयों के लेखन तथा कॉपीराईट संबंधी किसी भी मामले के लिए संबंधित इकाई लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद का निस्तारण सत्र न्यायालय–हल्द्वानी अथवा उच्च न्यायालय–नैनीताल में किया जाएगा। इस सामग्री के किसी भी अंश को उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अथवा मिमियोग्राफी चक्रमुद्रण द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

BAMI(N)-350

भारतीय शास्त्रीय संगीत का प्रगत अध्ययन– स्वरवाद्य एवं प्रयोगात्मक

संगीत– स्वरवाद्य में स्नातक(बी0ए0)–षष्ठम सेमेस्टर

इकाई 1– राग यमन का विस्तृत अध्ययन (आलाप, जोड़ झाला, स्वर विस्तार, मसीतखानी/विलम्बित गत, रजाखानी/द्रुत गत – पूर्ण वादन सहित, विभिन्न प्रकार की तोड़े एवं झाला, कल्याण रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान ।) **पृष्ठ 1–12**

इकाई 2– राग भैरव का विस्तृत अध्ययन (आलाप, जोड़ झाला, स्वर विस्तार, मसीतखानी/विलम्बित गत, रजाखानी/द्रुत गत–पूर्ण वादन सहित, विभिन्न प्रकार की तोड़े एवं झाला, भैरव रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान । **पृष्ठ 12–25**

इकाई 3– तीनताल का विस्तृत अध्ययन (ठेका, ठेके का प्रकार, संगत में प्रयोग, विभिन्न प्रकार की लयकारियाँ)। **पृष्ठ 26–38**

इकाई 4– एकताल का विस्तृत अध्ययन (ठेका, ठेके का प्रकार, संगत में प्रयोग, विभिन्न प्रकार की लयकारियाँ)। **पृष्ठ 39–47**

इकाई 5– अपनी विधा से सम्बंधित संगीत वाद्य का पूर्ण ज्ञान (संरचना, रख– रखाव, वाद्य मिलाने की विधि, प्रस्तुतिकरण में प्रयोग)। **पृष्ठ 48–68**

इकाई 6– संगीत का मानव जीवन में महत्व (सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रभावना आदि पहलुओं पर आधारित)। **पृष्ठ 69–78**

इकाई 1– राग यमन का विस्तृत अध्ययन (आलाप, जोड़ झाला, स्वर विस्तार, मसीतखानी/विलम्बित गत, रजाखानी/द्रुत गत– पूर्ण वादन सहित, विभिन्न प्रकार की तोड़े एवं झाला, कल्याण रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान।)

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 राग यमन का परिचय
1.3.1 राग यमन में मसीतखानी गत व तोड़ों को लिपिबद्ध करना
1.3.2 राग यमन में रजाखानी गत व तोड़ों को लिपिबद्ध करना
1.4 कल्याण रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान
1.5 सारांश
1.6 शब्दावली
1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
1.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम **(BAMI(N)-350)** के छठे सेमेस्टर की पहली इकाई है। प्रस्तुत इकाई में मसीतखानी गत, रजाखानी गत व तोड़ों को इस पद्धति में लिपिबद्ध करना भी सविस्तार समझाया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप स्वरलिपि पद्धति के महत्व को समझ सकेंगे तथा वर्तमान शिक्षण प्रणाली इसके द्वारा जिस प्रकार सुविधाजनक हो गई है वह भी जान सकेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप विभिन्न रागों के स्वरूप एवं गतों को स्वरलिपिबद्ध कर लिखित रूप में उसका ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- भारतीय संगीत के स्वरों, वर्णों, अलंकारों तथा राग रचनाओं के विभिन्न स्वरूपों को स्वरलिपि पद्धति में लिख पाऐंगे।
- आवश्यकता होने पर स्वरलिपि को पढ़ व समझ कर पुनः प्रस्तुति करने में सक्षम हो सकेंगे।
- स्वरों के विभिन्न स्वरूपों–शुद्ध, कोमल व तीव्र को सहज रूप में लिख कर प्रदर्शित कर सकेंगे।
- संगीत के विभिन्न सप्तकों को चिन्हित कर सकेंगे।
- संगीत के वर्णों–स्थायी, आरोही, अवरोही व संचारी को स्वरलिपि के माध्यम से भली–भॉति समझ सकेंगे।
- संगीत की राग रचनाओं, गतों के प्रकारों को स्वरलिपि में लिख सकेंगे तथा बार–बार पढ़ कर कंठस्थ कर सकेंगे, जिससे प्रस्तुतीकरण में सहजता प्राप्त होगी।
- स्वरलिपि के साथ ही तालिपि का भी ज्ञान आपको प्राप्त होगा। जिससे राग रचना अथवा गतों को विभिन्न भारतीय तालों में लिख सकेंगे तथा अपने वाद्य में सहजता से लय–ताल में प्रस्तुति देने में सफल हो सकेंगे।

1.3 राग यमन का परिचय

राग यमन भारतीय संगीत का प्रारम्भिक परन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण राग है। इसको कल्याण तथा ईमन आदि नामों से भी जाना जाता है। इसमें मध्यम स्वर तीव्र **(म')** तथा अन्य सभी स्वर शुद्ध प्रयोग किए जाते हैं। यह एक **सम्पूर्ण जाति** का राग है क्योंकि इसमें आरोह–अवरोह में सातों स्वरों का प्रयोग होता है। इसका वादी स्वर गन्धार**(ग)** तथा सम्वादी निषाद**(नि)** है। यह **पूर्वांगवादी राग** है। **रात्रि के प्रथम प्रहर** में यह राग गाया बजाया जाता है। यह कल्याण थाट से उपजा उसका आश्रय राग भी है। इस राग की अन्य मुख्य विशेषताएं निम्न हैं:–

आरोह	–	*नि़ रे ग म" प ध नि सां*
अवरोह	–	*सां नि ध प म" ग रे सा*
पकड़	–	*नि़ रे ग रे, सा, प म" ग, रे, सा*
न्यास स्वर	–	*सा, रे, ग, प तथा नि*

यह गम्भीर प्रकृति का अत्यन्त प्रचलित राग है। गायन में ध्रुपद, बडा ख्याल, छोटा खयाल तथा वादन में मसीतखानी व रजाखानी गतें भी इसमें बजाई जाती है। सितार, सरोद, वायलिन व बॉसुरी वादकों का भी यह प्रिय राग है। भारतीय संगीत में राग यमन की साधना विशेष रूप से की जाती है। इस राग का चलन निम्न प्रकार होता है।

- सा – – – , नि़ रे ग रे, ग – – –, नि़ रे ग म" प – रे – ग – – –,

  ग – रे –, नि़ ध़ नि़ – रे – , सा – – –

- सा – – – , नि़ ध़ नि़ ध़ प़ – – –, म़" ध़ नि़ ध़ प़ , नि़ ध़ नि़ – रे – , सा – – –

- ग म" ध, नि – – –, म" ध , नि – – – , ध़ – नि – नि, सां – – – नि ध

  नि रें, गं – – – , रें – गं– , रें – नि रें, सां – – –

- सां – – – , नि ध नि ध , प – – – , प म" – रे ग , ग – रे – नि़ ध़ नि़

  रे – – , ग – सा

उपरोक्त स्वर विस्तार से आपको ज्ञात होगा कि इस राग का विस्तार मध्य, मंद्र व तार तीनों सप्तकों में होता है।

आलाप / स्वर विस्तार

1. सा, नि॒ रे ग, मं ग रे ग, ग रे सा, नि॒ ध॒ नि॒ रे सा, सा नि॒ ध॒ नि॒ ध॒ प॒ मं॒ ध॒ नि॒ सा ध॒ नि॒ रे रे सा।

2. ग रे सा नि॒ ध॒ नि॒ रे ग, रे ग रे मं ग, मं ग रे ग रे ग मं प, मं ध प प मं रे मं ग रे ग मं प रे ऽ सा, नि॒ ध॒ नि॒ रे रे सा।

3. प मं ग रे ग मं प, ग मं ध॒प, नि॒ रे ग मं ध प, मं ध नि ध प मं ध प प मं ग, रे ग मं ध नि ध प, प ग रे ग, नि॒ ध॒ नि॒ रे ग मं प रे रे सा नि॒ ध॒ नि॒ रे सा।

4. ग मं ध नि, नि ध नि ध प, प मं ग मं ध नि, नि॒ रे ग मं, ग मं ध नि, ध नि रें सां, सां नि ध नि ध ऽ प, प रे ग मं ग मं ध नि सां ध नि रें सां, सां नि ध नि मं नि ध प, ध प मं प मं ग मं रे ग, रे ग मं ध प रे ग रे सा।

5. प ग मं ध नि नि सां, ध नि रें सां, ध नि रें ग रें सां, प ग मं ध नि सां नि रें गं मं रे ग, मं गं रें सां, सां नि ध ऽ प, प मं ग, नि ध प मं ग, रें सां नि ध नि ध प मं ग, गं रें सां नि ध नि रें सां, सां नि ध नि ध प, ग मं ध नि ध मं ग रे ग मं ग रे ग रे सा नि॒ ध॒ नि॒ रे सा।

जोड़ झाला

सां	नि॒	नि॒	सां	रे	रे	सां	ग	सां	मं	मं	सां	प	मं	सां	ग
रा	दा	दा	रा	दा	दा	रा	दा	रा	दा	दा	रा	दा	दा	रा	दा
सां	ध	नि	सां	सां	रें	गं	रें	सां	नि	ध	प	सां	ग	रे	सा–
रा	दा	दा	दा	रा	दा	दा	दा	रा	दा	दा	दा	रा	दा	दा	दा
X				2				**X**				3			

1.3.1 राग यमन में मसीतखानी गत व तोडों को लिपिबद्ध करना :

स्थायी (तीनताल)

		गग	रे सासा नि़ रे
		दिर	दा दिर दा रा
ग ग ग रेरे	ग म"म" प म"	ग रे सा रेरे	सा नि़नि़ ध़ प़
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दा दा रा दिर	दा दिर दा रा
म़" ध़ध़ नि़ सा	रे गग म" रे	ग रे सा	
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दा दा रा	
X	2	0	3

अन्तरा

		म"म"	ग म"म" ध नि
		दिर	दा दिर दा रा
सां सां सां निनि	ध निनि रें गं	रें नि सां रेंरें	सां निनि ध प
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दा दा रा दिर	दा दिर दा रा
म" निनि ध प	म" गग म" रे	ग रे सा	
दा दा रा दिर	दा दिर दा रा	दा दा रा	
X	2	0	3

मसीतखानी/विलम्बित गत के तोड़ों को लिपिबद्ध करना :

तोड़े :–

वक्र तान

		3				X		
1.	नि॒रेगरे	नि॒रेगम॑	गरेनि॒रे	ग॑मपम	गरेनि॒रे	ग॑मपध	पमगरे	नि॒रेसासा
		3				X		
2.	नि॒रेगरे	नि॒रेगम॑	गरेसारे	ग॑मपम	गरेनि॒रे	ग॑मपध	पमगरे	नि॒रेगम॑
		2				0	10	11
	पधनिसां	सांनिधप	सांनिधप	मगरेसा	सांनिधप	मगरेसा	सांनिधप	मगरेसा

खटके की तान

		2				0		
1.	निरेग(नि)	ऽरेगम॑	ग॑मप(ग)	ऽमपध	मपध(म॑)	ऽधनिसां	सांनिधप	मगरेसा
		3				X		
2.	निरेगरे	निरेगम॑	गरेसारे	ग॑म(प)	गरेनिरे	ग॑म(प)	पमगरे	निरेगम॑
		2				0		
	धनिसांरे	सांनिधप	सांनिधप	मगरेसा	सांनिधप	मगरेसा	सांनिधप	मगरेसा

गमक की तान

		3				X		
1.	मधनिरे	गगरेसा	निरेगम॑	पपमग	गमपध	निनिधप	निनिधप	मगरेसा
		3				X		
2.	नि॒रेगग	नि॒रेगम॑	धधपम॑	मधनिनि	धपधनि	निरेंगंगं	रेंसांगंरें	निरेंगंगं
		2				0		
	रेंसांपध	निनिधप	मधपध	ममगरे	नि॒रेगम॑	गगरेसा	गगरेसा	गगरेसा

सपाट तान

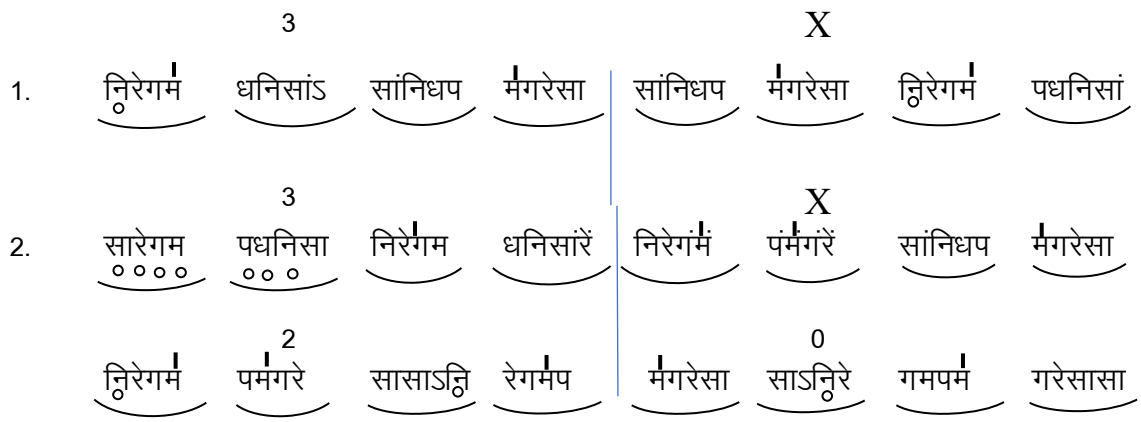

1.3.2 राग यमन में रजाखानी गत व तोडों को लिपिबद्ध करना :

स्थाई

ग म"म" प रे	– सासा नि़ रे	ग – ग रे	ग म"म" प –
दा दिर दा रा	ऽ दिर दा रा	दा ऽ दा रा	दा दिर दा ऽ
म" धध नि सां	– निनि ध प	ग म"म" पप म"म"	ग– गरे –रे सा–
दा दिर दा रा	ऽ दिर दा रा	दा दिर दिर दिर	दाऽ रदा ऽर दाऽ
0	3	X	2

अन्तरा

म" गग म" प	– निनि ध नि	सां – सां सां	नि रेंरें सां –
दा दिर दा रा	– दिर दा रा	दा – दा रा	दा दिर दा –
नि रेंरें गं सां	– निनि ध प	ग म"म" पप म"म"	ग– गरे –रे सा–
दा दिर दा रा	ऽ दिर दा रा	दा दिर दिर दिर	दाऽ रदा ऽर दाऽ
0	3	X	2

रजाखानी गत के तोडों को लिपिबद्ध करना :

वक्र तान

	1				2			
1.	धनि	सारें	सांनि	धप	गमं	धप	मंग	रेसा
	0				3			
2.	मंध	निसा	रेसा	निसा	सारे	गमं	पमं	गरे
	X				2			
	गमं	धनि	सांनि	धप	सांनि	धप	मंग	रेसा

खटके की तान

	1				2			
1.	गमं	पध	(प)ऽ	ऽग	मंग	रेसा	निरे	साऽ
	0				3			
2.	निसा	रे(नि)	ऽरे	गम	गम	प(ग)	ऽम	धनि
	X				2			
	धनि	सां(ध)	ऽनि	सारें	सांनि	धप	मंग	रेसा

गमक की तान

	1				2			
1.	पमं	मंग	रेरे	सानि	धनि	रेग	गग	रेसा
	0				3			
2.	मंध	निरे	गग	रेसा	गमं	धनि	निनि	धप
	X				2			
	मंध	निरें	गंगं	रेंसां	सांनि	धप	मंग	रेसा

सपाट तान

	X				2			
1.	सांनि	धप	मग	रेसा	नि̥रे	गम	धनि	सांऽ
	0				3			
2.	म̥॑ध̥	नि̥रे	गम॑	धनि	रेग	म॑प	म॑ग	रेसा
	X				2			
	सांनि	धप	म॑ग	रेसा	नि̥रे	गम	धनि	सांऽ

झाला

नि̥	सां	सां	रे	सां	सां	ग	सां	म॑	सां	सां	ध	सां	सां	नि	सां
दा	रा	रा	दा	रा	रा	दा	रा	दा	रा	रा	दा	रा	रा	दा	रा
नि̥	सां	सां	सां	रे	सां	सां	सां	ग	सां	सां	सां	म॑	सां	सां	सां
दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा
प	सां	सां	सां	ध	सां	सां	सां	नि	सां	सां	सां	सां	सां	सां	सां
दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा
प	सां	सां	सां	रे	सां	सां	सां	ग	सां	सां	सां	म॑	सां	सां	सां
दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा
ध	सां	सां	सां	नि	सां	सां	सां	रें	सां	सां	सां	सां	सां	सां	सां
दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा	दा	रा	रा	रा
X				2				**X**				3			

1.4 कल्याण रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान

यह शुद्ध राग होने के साथ–साथ रागांग राग भी है और प्रमुख रागांग रागों के सप्तक के पूर्वांग और उत्तरांग क्षेत्र के मुख्य रागांग बाचक स्वर समूह होते हैं जो अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं उस राग के समस्त प्रकार में कहीं न कहीं उसका प्रयोग अवश्य होता है।

उपरोक्त स्वर विस्तार में ध्यान से देखने पर कल्याण राग के रागांग वाचक स्वर समूहों का दर्शन होगा। यथा–

(1) नि॒ रे ग, रे सा, (2) ग मं प मग रे, ग सा,

(3) मं ध नि, ध प, (4) सां नि ध नि, ध प मं ग,

(5) प मं ग मं रे ग, (6) मं प ध प

कल्याण अंग के रागों में उपरोक्त रागांग वाचक स्वर समूहों में से किसी न किसी का वर्चस्व अवश्य होता है। इसके अतिरिक्त वर्जित स्वरों के आधार भी कल्याण अंग के रागों का निर्माण होता है। जैसे कल्याण के आरोह में रिषभ व धैवत वर्जित करने से मारू बिहाग का मूल स्वरूप सामने आयेगा। मध्यम व निषाद पूर्णतया बर्जित करने से भूपाली राग का आविर्भाव होगा। केवल आरोह में मध्यम, निषाद वर्जित करने से राग शुद्ध कल्याण का दर्शन होगा। केवल मध्यम वर्जित करने से कल्याण थाट के सावनी कल्याण तथा केवल अवरोह में मध्यम वर्जित करने से राग चन्द्रकान्त का स्वरूप बनेगा। इसी प्रकार कल्याण के आरोह में गंधार और धैवत बर्जित और कामोद का मिश्रण करने से श्याम कल्याण और मध्यम निषाद वर्जित कर राग जैत के कुछ अंश को मिलाने से जैत कल्याण एवं रिषभ वर्जित कर उत्तरांग में झिंझोटी का मिश्रण करने से राग सरस्वती तथा कल्याण के उत्तरांग के स्वर–समूह में पुरिया का मिश्रण करने से पुरिया कल्याण इत्यादि रागों का सृजन होता

इसके अतिरिक्त जब कल्याण राग का अल्प प्रमाण में अन्य रागों में मिश्रण किया जाता है वहाँ कल्याण अंग झलकने लगता है जैसे शुद्ध सारंग, देवगिरि बिलावल, यमनी बिलावल, मल्हुवा केदार, नन्द, हमीर, गीड़ सारंग इत्यादि।

प्रस्तुत राग कल्याण बाट का राग होने के कारण यह राग इस बाट का आश्रय राग माना जाता है। परन्तु रागांग राग की दृष्टि से यह अपने परिवार के समस्त रागों का आश्रयदाता राग है।

कल्याण राग के स्वरूप को समझने के लिये इसके स्वरों के लगाव एवं स्थान और परिमाण को समझना अत्यन्त आवश्यक है, इस हेतु इसके समस्त स्वरों के महत्व को प्रस्तुत किया जा रहा है।

षड्ज तो प्रत्येक राग का महत्वपूर्ण स्वर होता ही है परन्तु इस राग में विशेष बात यह है कि राग गायकी में नि॒ रे ग, व ग रे नि॒ ध्रु नि॒ रे ग, इत्यादि स्वर–संगतियों का बाहुल्य होने के कारण क्षणिक समय के लिये षड़ज का अल्पत्य दृष्टिगोचर होता है, परन्तु बड़ज की यह अल्पत्यता राग के सौन्दर्य एवं आकर्षण को बढ़ाने में पूर्ण सहायक होता है।

रिषभ स्वर आरोहावरोह दोनों में प्रयोग होने पर भी इस स्वर का अबरोह में न्यास बहुत्व के रूप में प्रयोग होता है। यथा नि॒ रे ग रे, ग मं प मं ग रे ग रे, ग मं प ग रे, ग रे, रे सा। गंधार स्वर इस राग में वादी स्वर एवं न्यास बहुत्व के रूप में प्रयोग होता है। यथा नि॒ रे ग, मं ग रे ग, ग मं प ग, मं रे मं ग, ध्रु नि॒ रे ग, इत्यादि।

यद्यपि प ग रे॒ स्वर संगति में गंधार का बार–बार लंघन भी दृष्टिगोचर होता है, परन्तु गंधार इस प्रकार क्षणिक समय के लिये छुप कर राग के सौंदर्य को बढ़ाने में सहायक होता है।

मध्यम स्वर गमंप, प म॑ ग, म॑ ध प, इत्यादि स्वर समूह में अनाभ्यास के रूप में तथा ग म॑ प ग रे व नि ध, प म॑ ग, इस स्वर संगति में लंघन अल्पत्व के रूप में प्रयोग होता है। पंचम स्वर प्रस्तुत राग में पूर्ण न्यास बहुत्व का स्वर है अर्थात् आरोह–अवरोह दोनों ही क्रम के स्वर–समूह से इस स्वर पर न्यास किया जाता है। यथा– ग म॑ प, ध म॑ प, सां नि ध नि ऽ ध प प ग रे ग रे नि॒ रे ग म॑ प, इत्यादि परन्तु उत्तरांग के स्वर विस्तार में म॑ ध नि की चलन होने के कारण पंचम स्वर का बार–बार लंघन होता रहता है। फिर भी म॑ ध प, म॑ ध नि ध प इत्यादि स्वर समूह से पंचम का बहुत्व सामने आता रहता है। कभी नि ध म॑ ग रे, ग म॑ ध नि म॑ नि ध म॑ ग रे इस प्रकार अवरोहात्मक क्रम में जब पंचम को लंघन किया जाता है, तो राग में तिरोभाव उत्पन्न होकर आनंद की अनुभूति कराता है।

धैवत स्वर म॑ ध नि ध प स्वर–समूह अनाभ्यास तथा म॑ ध नि ध ध प, इस प्रकार धैवत के बार बार प्रयोग से दीर्घ बहुत्व और प प सां इस प्रकार पंचम तार षड़ज की संगति में लंघन अल्पत्व में प्रयोग होता है।

निषाद स्वर उत्तरांग क्षेत्र का महत्वपूर्ण स्वर है म॑ ध नि, ध नि सां नि, ध नि रे सां नि, नि ध प म॑ ग रे ग म॑ ध नि, इस प्रकार न्यास बहुत्व परन्तु नि ध सां अथवा ग म॑ ध सां इस तरह धैवत षड़ज की संगति में लंघन अल्पत्व में प्रयोग होता है।

प्रस्तुत राग में नि॒ रे ग, प म॑ ग म॑ रे, प ग रे, म॑ ध नि ध सां इस स्वर संगतियों का प्रयोग बार–बार किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति करें :

1. राग यमन का वादी स्वर ———— है।
2. राग यमन का गायन समय ———— है।
3. राग यमन की पकड़ ———— है।
4. राग यमन का थाट ———— है।

ब) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. राग यमन का परिचय दीजिए।

1.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप भारतीय रागों की रचनाओं (मसीतखानी व रजाखानी गतों) को स्वरलिपि तथा तालिपि के द्वारा पूर्ण रूप से लिपिबद्ध करने तथा भविष्य के लिए सुरक्षित रखने में स्वयं को योग्य पाऐंगे। आप यह भी जान गए होंगे कि बिना सीखे, इस पद्धति में लिपिबद्ध रचनाओं (मसीतखानी व रजाखानी गतों) को किस तरह समझ कर बजाया जा सकता है।

1.6 शब्दावली

1) विकृत स्वर – स्वरों का अपनी स्थिति से नीचा होना कोमल तथा ऊंचा होना तीव्र कहलाता है। इन्हें विकृत स्वर कहा जाता है।

2) सप्तक – सात स्वरों के क्रमानुसार समूह को सप्तक कहते हैं।

3) मींड़ – एक स्वर से किसी अन्य स्वर में ध्वनि को तोडे बिना गाना/बजाना मीड़ कहलाता है। जैसे – म ग रे

4) गत – तंत्री वाद्यों में बजने वाली राग रचनाएं गत कहलाती हैं।
5) कण – किसी स्वर को समीप वाले स्वर से स्पर्श कर गाना अथवा बजाना।
6) लयकारी – गायन/वादन की सामान्य क्रिया को दुगुन, तिगुन व चौगुन में प्रस्तुत करना लयकारी कहलाता है।
7) मसीतखानी गत – वाद्य यंत्रों में बजने वाली विलम्बित गत, जिसे सितार वादक मसीत खॉ द्वारा प्रचलित किया गया, मसीतखानी गत कहलाती है।
8) रजाखानी गत – वाद्य यंत्रों में बजने वाली रागों की मध्य/द्रुत रचनाएं जिन्हें सितार वादक रजाखान द्वारा प्रचलित किया गया, रजाखानी गत कहलाती हैं।
9) उत्तरांगवादी – जिस राग का वादी स्वर, सप्तक के उत्तरी भाग–*म प ध नी सां* में हो, वह उत्तरांगवादी कहलाता है। ऐसे राग मध्य व तार सप्तक में अधिक प्रभावी होते हैं।

1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.4 की उत्तरमाला :–

1. गांधार 2. रात्रि का प्रथम प्रहर है। 3. नि़ रे ग रे, सा, प म" ग, रे, सा 4. कल्याण

5.5 की उत्तरमाला :–

1. धैवत 2. दिन का प्रथम प्रहर 3. बिलावल 4. गंधार

1.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पं0 विष्णुनारायण, *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति–क्रमिक पुस्तक मालिका भाग–2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. देवांगन, श्री तुलसी राम, *बेला वादन शिक्षा,* संगीत प्रेस, 88 साउथ मलाका, इलाहाबाद।
3. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, *राग परिचय भाग – 1,* संगीत सदन प्रकाशन, साउथ मालाका, इलाहाबाद।
4. चौबे, डा0 सुशील कुमार, *हमारा आधुनिक संगीत,* उ0प्र0 हिन्दी संस्थान, लखनऊ।

1.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वसन्त, *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय, हाथरस (उ0 प्र0)।
2. *संगीत* मासिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस (उ0 प्र0)।

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति को विस्तार से समझाइए।
2. राग यमन का पूर्ण परिचय आलाप, मसीतखानी गत, रजाखानी गत एवं तोडों के साथ दीजिए।

इकाई 2– राग भैरव का विस्तृत अध्ययन (आलाप, जोड़ झाला, स्वर विस्तार, मसीतखानी/विलम्बित गत, रजाखानी/द्रुत गत– पूर्ण वादन सहित, विभिन्न प्रकार की तोड़े एवं झाला, भैरव रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान।)

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 राग भैरव का परिचय
2.3.1 राग भैरव में मसीतखानी गत व तोड़ों को लिपिबद्ध करना
2.3.2 राग भैरव में रजाखानी गत व तोड़ों को लिपिबद्ध करना
2.4 भैरव रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान
2.5 सारांश
2.6 शब्दावली
2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (**BAMI(N)-350**) के छठे सेमेस्टर की दूसरी इकाई है। प्रस्तुत इकाई में मसीतखानी गत, रजाखानी गत व तोड़ों को इस पद्धति में लिपिबद्ध करना भी सविस्तार समझाया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप स्वरलिपि पद्धति के महत्व को समझ सकेंगे तथा वर्तमान शिक्षण प्रणाली इसके द्वारा जिस प्रकार सुविधाजनक हो गई है वह भी जान सकेंगे। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप विभिन्न रागों के स्वरूप एवं गतों को स्वरलिपिबद्ध कर लिखित रूप में उसका ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- भारतीय संगीत के स्वरों, वर्णों, अलंकारों तथा राग रचनाओं के विभिन्न स्वरूपों को स्वरलिपि पद्धति में लिख पाऐंगे।
- आवश्यकता होने पर स्वरलिपि को पढ़ व समझ कर पुनः प्रस्तुति करने में सक्षम हो सकेंगे।
- स्वरों के विभिन्न स्वरूपों–शुद्ध, कोमल व तीव्र को सहज रूप में लिख कर प्रदर्शित कर सकेंगे।
- संगीत के विभिन्न सप्तकों को चिन्हित कर सकेंगे।
- संगीत के वर्णों–स्थायी, आरोही, अवरोही व संचारी को स्वरलिपि के माध्यम से भली–भॉति समझ सकेंगे।
- संगीत की राग रचनाओं, गतों के प्रकारों को स्वरलिपि में लिख सकेंगे तथा बार–बार पढ़ कर कंठस्थ कर सकेंगे, जिससे प्रस्तुतीकरण में सहजता प्राप्त होगी।
- स्वरलिपि के साथ ही तालिपि का भी ज्ञान आपको प्राप्त होगा। जिससे राग रचना अथवा गतों को विभिन्न भारतीय तालों में लिख सकेंगे तथा अपने वाद्य में सहजता से लय–ताल में प्रस्तुति देने में सफल हो सकेंगे।

2.3 राग भैरव का परिचय

राग भैरव की रचना थाट भैरव से मानी गई है। राग भैरव रिषभ धैवत कोमल लगते हैं। इसकी जाति सम्पूर्ण–सम्पूर्ण है अर्थात् आरोह–अवरोह में सातों स्वर प्रयोग किये जाते हैं। वादी स्वर धैवत तथा सम्वादी स्वर रिषभ है। इसका गायन एंव वादन–समय प्रातः काल सन्धि प्रकाश है ।

आरोह– सा रे ग म प ध नि सां ।
अवरोह– सां नि ध प म ग रे सा ।
पकड़– ग म ध ऽ ध प म प ग म रे ऽ रे ऽ सा ।

विशेषता–

(1) थाट भैरव का आश्रय राग है, क्योंकि इस राग के आधार पर इसके थाट का नामकरण हुआ है ।
(2) राग भैरव को संधिप्रकाश राग भी कहते हैं। कारण स्पष्ट है कि इसे प्रातःकाल संधिप्रकाश के समय गाते–बजाते हैं ।
(3) इस राग में कोमल रे ध आंदोलित किया जाता है जैसे– ग म रे 5 ऽ सा अथवा ग म ध ऽ ऽ प। आन्दोलन करते समय ऊपर के स्वर को स्पर्श करते हैं ।
(4) अवरोह में अधिकतर गंधार वक्र प्रयोग किया जाता है जैसे– ग म रे ऽ रे सा ।
(5) राग भैरव गम्भीर तथा करुण प्रकृति का राग है। इस राग में ध्रुपद, धमार, बड़ा ख्याल, छोटा ख्याल तथा तराना गाये जाते हैं, ठुमरी नहीं गाई जाती है।
7) इसके आरोह में कभी–कभी पंचम वर्ज्य कर दिया जाता है, जैसे– सा ग म ध 5 प (8) दक्षिणी संगीत पद्धति में इस राग को मायामालवगौड़ राग कहते हैं। वहाँ संगीत शिक्षा इसी राग से शुरू की जाती है ।

न्यास के स्वर– सा, रे, प और ध । समप्रकृति राग– कालिंगड़ा और रामकली ।
भैरव– सा ऽ रे सा, ग म ध ध प म प ग रे ऽ रे सा । कालिंगड़ा– सा रेग, मग, धपमपमग, मग, रेसा ।
विशेष स्वर–संगतियाँ–
1– ग म ध ऽ ध प ।
2– ग म रे ऽ रे सा ।
3– ग म ध ध नि सां रेंऽ रें सां ।

भैरव राग का मुख्य चलन इस प्रकार है :

1. ग म रे – रे – सा – – – , ध ध नि – सा – – – , सा – ध – ध – प – – – , ध – नि – सा

2. सा ग म प, ग म ध – ध – प , म प ग म ध – ध – प, प – – म प, ग म रे – रे – सा

3. प – – – , म प ग म, ध – ध – , नि – नि – , सां – – – , सां – – , रें – रें – , सां – – – , (सां) – – ध – ध – प – – – , ध म प – , ग म रे – रे – , सा – – –

आलाप / स्वर विस्तार

1– सा रे ऽ रे सा, ध नि सा रे ऽ रे ऽ सा, ग म रे ऽ रे सा ।

2– सा रे ग म प ग म ध ध प, ध प म प ग म ध ऽ ध प, ध म प ऽ ग म रे, ध ध प, (प) ग म रे ऽ रे सा, ध नि सा, रे ऽ रे सा ।

3– ग म ध ऽ ध प, ग म ध ध नि ध प नि ध प, ध प म प ऽ गं म ग म ध ध प, धपमप मग मरे, ध ध प म प ग (म) रे रे सा, ध नि सा रे रे सा ।

4– ग म ध ऽ ध ऽ नि सां ऽ ऽ रें सां गं मं रें रें सां, गं रें सां रें सां नि ध ध प, ध प म प, ग म रे रे, सां नि सां ध नि ध प ध प म प म ग म रे रे ध ध प म प ग म ऽ रे ऽ रे सा ।

5 म प नि ध नि ध ध प, प ग म रे ग म ध ध नि ध ध प, सा रे ग म प ध म प ग म ध ध नि ध, ध सां सां ध नि ध, ध प, ध ध प म प ग म प म रे, रे ध प (म) रे रे ग म रे, रे सा ध॰ ध॰ नि॰ सा

जोड़ झाला

सां	रे	ग	सां	म	ध	सां	नि	सां	रे	ग	सां	म	रे	सां	सा
रा	दा	दा	रा	दा	दा	रा	दा	रा	दा	दा	रा	दा	दा	रा	दा
सां	ध	नि	सां	सं	रें	गं	रें	सां	नि	ध	प	सां	ग	रे	सा–
रा	दा	दा	दा	रा	दा	दा	दा	रा	दा	दा	दा	रा	दा	दा	दा
X				2				0				3			

2.3.1 राग भैरव में मसीतखानी/विलम्बित गत व तोड़ों को को लिपिबद्ध करना

मसीतखानी/विलम्बित गत
स्थाई(तीनताल)

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
											गम	रे	सासा	ध॰	निसा
											दिर	दा	दारा	दा	दारा
रे	रे	सा	निसा	ध॰	निसा	रे	गम	रे	ररे	सा	गम	रे	सासा	ध॰	निसा
दा	दा	रा	दिर	दा	दारा	दा	रा	दा	दा	रा	दिर	दा	दारा	दा	दारा
ध॰	ध॰	प़	मप़	ग़	गम़	ध॰	निसा	रे	ररे	सा					
दा	दा	रा	दिर	दा	दारा	दा	रा	दा	दा	रा					
X				2				0				3			

अन्तरा

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
											गम	रेसा	गम	ध	निनि़
											दिर	दा	दारा	दा	दारा
सां	सां	सां	धनि	सां	रेंरें	सां	गंमं	रें	रें	सां	धनि	सां	रेंरें	सां	निसां
दा	दा	रा	दिर	दा	दारा	दा	रा	दा	दा	रा	दिर	दा	दारा	दा	दारा
ध	ध	प	गम	ध	धध	प़	गम	रे	रेरे	सा					
दा	दा	रा	दिर	दा	दारा	दा	रा	दा	दा	रा					
X				2				0				3			

मसीतखानी/विलम्बित गत के तोड़ों को लिपिबद्ध करना :

तोड़े :–

वक्र तान

		3				X		
1.	सारेगरे	सारेगम	गरेसारे	गमपम	गरेसारे	गमपध	पमगरे	सारेगम
		3				X		
2.	सारेगरे	सारेगम	गरेसारे	गमपम	गरेसारे	गमपध	पमगरे	सारेगम
		2				0	10	11
	पधनिसा	सानिधप	सानिधप	मगरेसा	सानिधप	मगरेसा	सानिधप	मगरेसा

खटके की तान

		2				0		
1.	सारेग(सा)	ऽरेगम	गमप(ग)	ऽमपध	मपध(म)	ऽपधनि	सांनिधप	मगरेसा
		3				X		
2.	सारेगरे	सारेगम	गरेसारे	गम(म)	गरेसारे	गम(प)	पमगरे	सारेगम
		2				0		
	पधनिसां	सांनिधप	सांनिधप	मगरेसा	सांनिधप	मगरेसा	सांनिधप	मगरेसा

गमक की तान

		3				X		
1.	धनिसारे	गगरेसा	सारेगम	पपमग	गमपध	निनिधप	निनिधप	मगरेसा
		3				X		
2.	सारेगग	रेसागम	धधपम	पधनिनि	धपधनि	सांरेंगंगं	रेंसांगंरें	सांरेंगंगं
		2				0		
	रेंसांपध	निनिधप	मधपध	ममगरे	सारेगम	गगरेसा	गगरेसा	गगरेसा

सपाट तान

		3				X		
1.	सारेगम	पधनिसां	सांनिधप	मगरेसा	सांनिधप	मगरेसा	सारेगम	पधनिसां
		3				X		
2.	सारेगम	पधनिसा	रेगमप	धनिसांरें	गंमंपंऽ	पंमंगंरें	सांनिधप	मगरेसा
	ऽऽसारे	2 गमपध	निसांऽऽ	सारेगम	पधनिसां	0 ऽऽसारे	गमपध	निसांऽऽ

2.3.2 राग भैरव में रजाखानी/द्रुत गत को लिपिबद्ध करना :

स्थाई(तीनताल)

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
								म	पप	ग	म	ध	S	नि	सां
								दा	दिर	दा	रा	दा	दिर	दा	रा
सां	S	सांसां	सांS	सं	रेंरें	सां	S	सां	रेरे	गं	रें	सां	निनि	सां	S
दा	S	दा	रा	छा	दिर	दा	S	दा	दिर	दा	रा	दा	दिर	दा	रा
सांसां	निनि	धध	पप	गS	मरे	Sरे	साS								
दारा	दादा	रादा	दारा	दाS	रदा	Sदा	रा S								
X				2				0				3			

अन्तरा

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
								ध	धध	प	ध	म	पप	ग	म
								दा	दिर	दा	रा	दा	दिर	दा	रा
रे	S	ग	म	रे	रेरे	सा	S	सा	रेरे	ग	म	प	धध	नि	सां
दा	S	दा	रा	छा	दिर	दा	श्रा	दा	दिर	दा	रा	दा	दिर	दा	रा
धध	पप	गग	मम	गS	गरे	Sरे	साS								
दारा	दादा	रादा	दारा	दाS	रदा	Sदा	रा S								
X				2				0				3			

रजाखानी गत के तोडों को लिपिबद्ध करना :

वक्र तान

	1				2			
1.	धनि	सारें	सांनि	धप	गम	धप	मग	रेसा
	0				3			
2.	पध	निसा	रेसा	निसा	सारे	गम	पम	गरे

X				2			
गम	धनि	सांनि	धप	सांनि	धप	मग	रेसा

खटके की तान

	1				2			
1.	गम	पध	(प)ऽ	ऽग	मग	रेसा	निरे	साऽ
	0				3			
2.	निसा	रे(नि)	ऽसा	रेम	गम	प(ग)	ऽम	पध
	X				2			
	धनि	सां(ध)	ऽनि	सांरें	सांनि	धप	मग	रेसा

गमक की तान

	1				2			
1.	पम	मग	रेरे	सानि	धनि	सारे	गग	रेसा
	0				3			
2.	धनि	सारे	गग	रेसा	गम	पध	निनि	धप
	X				2			
	धनि	सांरें	गंग	रेंसां	सांनि	धप	मग	रेसा

सपाट तान

	X				2			
1.	सांनि	धप	मग	रेसा	सारे	गम	पध	निसां
	0				3			
2.	सारे	गम	पध	निसां	सांनि	धप	मग	रेसा
	X				2			
	सांनि	धप	मग	रेसा	सारे	गम	पध	निसां

झाला

नि॒ सां सां रे	सां सां ग सां	म सां सां ध	सां सां नि सां
दा रा रा दा	रा रा दा रा	दा रा रा दा	रा रा दा रा
नि॒ सां सां सां	रे सां सां सां	ग सां सां सां	म सां सां सां
दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा
प सां सां सां	ध सां सां सां	नि सां सां सां	सां सां सां सां
दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा
प सां सां सां	रे सां सां सां	ग सां सां सां	म सां सां सां
दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा
ध सां स__ां सां	नि सां सां सां	रें सां सां सां	सां सां सां सां
दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा
ग सां सां सां	म सां सां सां	ध सां सां सां	प सां सां सां
दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा
ग सां सां सां	म सां सां सां	रें सां सां सां	सा सां सां सां
दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा	दा रा रा रा
x	2	x	3

2.4 भैरव रागांग पर आधारित रागों का ज्ञान

राग भैरव में स्वरों का लगाव इस प्रकार है। सर्वप्रथम षडज स्वर को लगाने के बाद रिषभ स्वर का आंदोलित प्रयोग किया जाता है। अर्थात आरोहात्मक रिषभ के भी अवरोहात्मक लगाव को ध्यान में रखा जाता है। जिसके कारण रिषभ के आंदोलित उच्चारण से अल्प रूप में गांधार स्वर का भी आभास होता है। जैसे– सा ग रे ग रे सा ये स्वर राग के पूर्वांग का संवादी एवं रागांग वाचक स्वर है अर्थात पूर्वांग में भैरव अंग को उत्पन्न करने का श्रेय रिषभ को ही जाता है। परन्तु इस राग का कुछ चलन ही इस प्रकार है जो केवल धैवत को छोड़कर अन्य स्वर का राग में न्यास अथवा बहुत्व होने पर किसी न किसी प्रकार लंघन अल्पत्व अथवा वन अल्पत्व अवश्य दृष्टिगोचर होता है। रिषभ स्वर न्यास युक्त होने पर भी नि सा गवसाग स्वर संगति में लंघन अल्पत्व दोष से मुक्त नहीं हो पाता। यद्यपि इस प्रकार एक ही स्वर में बहुत्व एवं अल्पत्व व न्यास का गुण–दोष दिखाई देना राग के आकर्षण को बढ़ाने में सहायक होता है। परन्तु इस गुण दोष का सही ज्ञान प्रारम्भिक शिक्षार्थियों के लिए काफी कठिन होता है।

गंधार स्वर आरोहात्मक क्रम में सा ग रे ग रे ग ऽ म ग म प ध़ घ़ सा, साग ग म, इस प्रकार अभ्यास एवं अलंघन व दीर्घ बहुत्व के रूप में परन्तु अवरोहात्मक क्रम में– प म ग म रे, एवं ग म रे इस प्रकार वक्र होकर अनाभ्यास अल्पत्व के रूप में प्रयोग होता है।

मध्यम स्वर ग म प म ग इस प्रयोग में अनाभ्यास के रूप में परन्तु ग म प ग म रे, इस प्रकार प ग की संगति में लंघन अल्पत्व में परन्तु यदा–कदा सा ग ग म म इस प्रकार दीर्घ प्रयोग के रूप में भी दृष्टिगोचर होता है।

पंचम स्वर प्रस्तुत राग में पूर्ण न्यास का स्वर होने पर भी बहुत्व एवं अल्पत्व गुण से मुक्त नहीं है। जैसे ग म प, म प ध प, ध प म प। इस प्रकार के लगाव में अलंघन बहुत्व के रूप में परन्तु ग म ध प ध म प ग म प, इस प्रकार म ध और ध म की संगति में लंघन अल्पत्व के रूप में प्रयोग होता है। इसके अतिरिक्त म प ध ध नि सां चलन के अलावा रागालाप में ग म ध ध नि सां चलन में भी पंचम का लंघन होकर पुनः नि सां ध ध प, स्वर संगति में न्यास पद पर प्रतिष्ठित होता है। इस प्रकार ऋषभ की भाँति पंचम अभ्यास–अनाभ्यास एवं लंघन अलंघन तथा अल्पत्व–बहुत्व इन सभी लक्षण से युक्त होकर अपने विविध रूपों से राग गायकी को उत्कृष्ट बनाने में सहयोग करता है।

धैवत स्वर भैरवांग के उत्तरांग स्वरूप को स्थायित्व प्रदान करने में न्यास बहुत्व तथा वादित्व गुण से युक्त होकर राग स्वरूप को सजाने में अपने दायित्व को निभाता रहता है। जैसे सां ध नि ध नि सां नि ध नि ध नि ध प। इस प्रकार निषाद कण से युक्त अन्दोलित होकर प्रयोग होता रहता है।

निषाद स्वर प्रस्तुत राग विस्तार में ध नि सां, सां नि ध ध प स्वर समूह के प्रयोग में अनाभ्यास के रूप में परन्तु म प ध ध सां अथवा सां ध ध प स्वर समूह के प्रयोग में लंघन अल्पत्व के रूप में प्रयोग होता है। इस प्रकार रागांग राग भैरव का स्वरूप स्वरों के षडज–पंचम भाव पर पूर्ण रूप से आधारित होने के कारण वैराग्य, भक्ति एवं शान्त रसों को व्यक्त करता है।

रागांग राग भैरव के समस्त स्वरों के प्रयोग एवं महत्व को समझने के उपरान्त इसके रागांग वाचक स्वर समूहों को जानना बहुत जरुरी है, क्योंकि रागांग वाचक स्वर–समूहों में ही भिन्न–भिन्न रागों का मिश्रण करके भैरव के विभिन्न प्रकार का सृजन होता है। प्रत्येक प्रमुख रागांग रागों में पूर्वांग एवं उत्तरांग के दो रागांग वाचक स्वर–समूह होते हैं। जो पूर्वांग तथा उत्तरांग में राग स्वरूप को दर्शाने में सहायक होते हैं। जैसे– भैरव का रागांग वाचक स्वर समूह–

पूर्वांग– ग म प ग म रे, रे, रे सा, उत्तरांग– म प ध नि सां नि ध प, ये दोनों स्वर समूह भैरव राग रूपी शरीर में रीढ़ की हड्डी के समान हैं तथा पूर्वांग में ऋषभ और उत्तरांग में धैवत प्राण सदृश्य है। भैरव के पूर्वांग के स्वर समूह में उत्तरांग में बिलावल मिलाने से आनन्द भैरव, उत्तरांग में काफी अथवा खमाज मिलाने से अहीर भैरव, उत्तरांग में ही राग भिन्न षडज मिलाने से सौराष्ट्र भैरव राग का आविर्भाव होता है। इसी प्रकार भैरव के उत्तरांग के स्वर–समूह में पूर्वांग में राग नट का मिश्रण करने से वर्तमान नट भैरव तथा प्राचीन हिजाज भैरव राग का सृजन होता है।

इसके अतिरिक्त रागांग रागों में अर्थात् बेसिक रागों के संपूर्ण स्वरूप में अन्य राग अथवा कोई विशिष्ट स्वर–समूह को मिलाने से भी रागांग रागों के प्रकार बनते हैं जैसे– भैरव में मध्यम के निकट राग ललित का अंश मिलाने से प्रभात भैरव, तथा पूर्वांग में तोड़ी और उत्तरांग में कान्हड़ा के स्वर–समूहों का अल्प प्रमाण में मिश्रण करने से शिवमत भैरव, इसके अतिरिक्त कुछ विशिष्ट स्वर–समूह जैसे म॑ प ध नि ध प, स्वर–समूह मिलाने से राग रामकली का सृजन होता है।

इसके अतिरिक्त स्वर वर्जित के आधार पर कुछ रागों का सृजन होता है जैसे–भैरव में गंधार–निषाद वर्जित करने से गुनकली, मध्यम–निषाद वर्जित करने से विभास, रिषभ–गंधार वर्जित करने से देव रंजनी तथा केवल निषाद वर्जित करने से बंगाल भैरव इत्यादि रागों की रचना की गई है।

इसके अतिरिक्त रागांग रागों के वादी–संवादी एवं अन्य न्यास के स्वरों के स्थान में परिवर्तन करने से कुछ रागों का सृजन होता है। जैसे भैरव राग में धैवत–रिषभ के स्थान पर पंचम–षड्ज वादी–संवादी एवं गंधार–निषाद का न्यास युक्त प्रयोग से कालिंगड़ा, तथा कालिंगड़ा में ही ग रे सा रे नि॒ सा नि ध॒ नि॒ इस विशिष्ट स्वर–समूह के प्रयोग से गौरी राग तथा धैवत–रिषभ के स्थान पर मध्यम–षड़ज वादी संवादी करने से जोगिया इत्यादि इन उप रागांग रागों का आविर्भाव होता है।

अभिप्राय यह है कि राग एवं राग गायकी को समझने के लिए सर्व प्रथम इन रागांग रागों का अभ्यास एवं चिन्तन–मनन करना आवश्यक है। क्योंकि ये मूल राग हैं इन्हीं कुछ शुद्ध रागों में मिश्रण, वर्जित, वादी–संवादी, कुछ विशिष्ट स्वर–समुदाय भेद के आधार पर भिन्न–भिन्न रागों का सृजन होता है। पुनः एक दूसरे अंग के रागों के परस्पर मिश्रण भेद से मिश्रण एवं संकीर्ण रागों की उत्पत्ति होती है।

आरोह सा रे, ग म प, ध, नि सां।

अवरोह– सां नि ध, प, म ग रे, सा।

मुख्य स्वर समूह – ग म $^{नि}$ ध, $^{नि}$ ध प, ग म रे, रे सा।

अभ्याास प्रश्न

अ) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

1. राग भैरव किस प्रकृति का राग है?
2. राग भैरव का वादी स्वर क्या है?
3. राग भैरव प्रातः उषा काल का राग होने से क्या कहलाता है?
4. राग भैरव में ऋषभ व धैवत स्वर कैसे होते हैं?

ब) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. राग भैरव का परिचय दीजिए।

2.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप पं0 विष्णु नारायण भातखण्डे की ''भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति'' के माध्यम से भारतीय रागों की रचनाओं(मसीतखानी व रजाखानी गतों) को स्वरलिपि तथा तालिपि के द्वारा पूर्ण रूप से लिपिबद्ध करने तथा भविष्य के लिए सुरक्षित रखने में स्वयं को योग्य पाऐंगे। आप यह भी जान गए होंगे कि बिना सीखे, इस पद्धति में लिपिबद्ध रचनाओं(मसीतखानी व रजाखानी गतों) को किस तरह समझ कर बजाया जा सकता है।

2.6 शब्दावली

1) विकृत स्वर – स्वरों का अपनी स्थिति से नीचा होना कोमल तथा ऊंचा होना तीव्र कहलाता है। इन्हें विकृत स्वर कहा जाता है।

2) सप्तक – सात स्वरों के क्रमानुसार समूह को सप्तक कहते हैं।

3) मींड़ – एक स्वर से किसी अन्य स्वर में ध्वनि को तोडे बिना गाना/बजाना मीड़ कहलाता है। जैसे – म ग रे

4) गत – तंत्री वाद्यों में बजने वाली राग रचनाएं गत कहलाती हैं।

5) कण – किसी स्वर को समीप वाले स्वर से स्पर्श कर गाना अथवा बजाना।

6) लयकारी – गायन/वादन की सामान्य क्रिया को दुगुन, तिगुन व चौगुन में प्रस्तुत करना लयकारी कहलाता है।

7) मसीतखानी गत – वाद्य यंत्रों में बजने वाली विलम्बित गत, जिसे सितार वादक मसीत खॉ द्वारा प्रचलित किया गया, मसीतखानी गत कहलाती है।

8) रजाखानी गत – वाद्य यंत्रों में बजने वाली रागों की मध्य/द्रुत रचनाएं जिन्हें सितार वादक रजाखान द्वारा प्रचलित किया गया, रजाखानी गत कहलाती हैं।

9) उत्तरांगवादी – जिस राग का वादी स्वर, सप्तक के उत्तरी भाग–*म प ध नी सां* में हो, वह उत्तरांगवादी कहलाता है। ऐसे राग मध्य व तार सप्तक में अधिक प्रभावी होते हैं।

2.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अ) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

1. गम्भीर
2. धैवत
3. संधि प्रकाश राग
4. कोमल व आंदोलित

2.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पं0 विष्णुनारायण, *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति–क्रमिक पुस्तक मालिका भाग–2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. देवांगन, श्री तुलसी राम, *बेला वादन शिक्षा,* संगीत प्रेस, 88 साउथ मलाका, इलाहाबाद।
3. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, *राग परिचय भाग – 1,* संगीत सदन प्रकाशन, साउथ मालाका, इलाहाबाद।
4. चौबे, डा0 सुशील कुमार, *हमारा आधुनिक संगीत,* उ0प्र0 हिन्दी संस्थान, लखनऊ।

2.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वसन्त, *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय, हाथरस (उ0 प्र0)।
2. *संगीत* मासिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस (उ0 प्र0)।

2.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भातखण्डे स्वरलिपि पद्धति को विस्तार से समझाइए।
2. राग यमन का पूर्ण परिचय आलाप, मसीतखानी गत, रजाखानी गत एवं तोडों के साथ दीजिए।

3.3 इकाई 3– तीनताल का विस्तृत अध्ययन (ठेका, ठेके के प्रकार, संगत में प्रयोग, विभिन्न प्रकार की लयकारियाँ)।

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 तीनताल का विस्तृत अध्ययन

3.3.1 तीनताल का सम्पूर्ण परिचय

3.3.2 ठेका, ठेके के प्रकार

3.3.3 संगत में प्रयोग

3.4 तीनताल की लयकारियाँ

3.4.1 लयकारियाँ

3.5 सारांश

3.6 शब्दावली

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए. संगीत के पाठ्यक्रम (BAMI(N)-350) के छठे सेमेस्टर की तीसरी इकाई है। राग भैरव के विलम्बित ख्याल, छोटा ख्याल एवं ध्रुपद–धमार की बंदिशों एवं गीतों को लिपिबद्ध करना तथा भैरव रागांग के बारे में सविस्तार समझाया गया है, जिसे आप समझ चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में भातखण्डे जी द्वारा निर्मित तालिपि पद्धति में तीनताल का पूर्ण परिचय देते हुए लिपिबद्ध भी किया गया है। साथ ही ताल की लयकारियाँ भी प्रस्तुत की गई हैं।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप तालिपि पद्धति के महत्व को समझ सकेंगे। हिन्दुस्तानी संगीत से सम्बन्धित तालों के विभिन्न तत्वों को भी जान सकेंगे। गीत रचनाओं में तालों के प्रयोग एवं उन्हें लिपिबद्ध करने की पद्धति को भी आप समझ सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- बता सकेंगे कि तालिपि पद्धति द्वारा किस प्रकार ताल का क्रियात्मक स्वरुप प्रस्तुत किया जा सकता है।
- ताल सम्बन्धी समस्त तत्वों को समझते हुए उनके प्रयोग सम्बन्धी नियमों को भी जान सकेंगे।
- ताल के लयकारी सम्बन्धी पक्ष को समझते हुए संगीत में इनका प्रयोग कर सकेंगे।

3.3 तीनताल का विस्तृत अध्ययन

भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्रमुख रुप से तालों में तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, धमारताल, तिलवाड़ा ताल एवं रूपक ताल का प्रयोग होता है। तीनताल एवं एकताल ख्याल गायन में सबसे प्रमुख तथा चारताल ध्रुपद गायन की सबसे प्रमुख ताल है। आप ताल सम्बन्धी सम्पूर्ण तत्वों का अध्ययन कर चुके हैं। अब आप पाठ्यक्रम से सम्बन्धित तीनताल का विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे।

3.3.1 तीनताल का सम्पूर्ण परिचय :

मात्रा – *16*, **विभाग** – *4*, **ताली** – *1, 5 व 13* पर तथा **खाली** – *9* पर

ठेका

धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	धिं	धिं	धा	धा
X				2				0			3				X

परिचय – तीनताल में 16 मात्राएँ होती हैं। यह 16 मात्राएँ 4 विभागों में बटी रहती हैं। चारों विभाग 4–4 मात्राओं के होते हैं। जैसा कि आप सम की परिभाषा जान चुके हैं कि सम हमेशा प्रथम मात्रा पर होता है। तीनताल में सम 'धा' पर है। खाली का स्थान ताल में बीचों–बीच 9वीं मात्रा पर है।

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत 'तीनताल' बहुत महत्वपूर्ण ताल है। रागों में द्रुत ख्यालों में अधिकतर इसी ताल का प्रयोग होता है। अनेक विलम्बित ख्याल भी तीनताल में गाए जाते हैं। ताल में सम का स्थान प्रथम मात्रा में होता है परन्तु अधिकतर ख्याल गायन की बंदिशों का प्रारम्भ खाली से होता है इसलिए आवश्यक नहीं है कि बंदिश की पहली मात्रा पर भी सम ही होगा। कई विद्वान इस ताल के बोलों में 'धा' के स्थान पर 'ना' शब्द का प्रयोग भी करते हैं। जैसे – ना धिं धिं ना, ना धिं धिं ना। तबला वादन में भी यह ताल सबसे प्रमुख रूप से बजायी जाती है। अति द्रुत गति के तराना गायन में भी तीनताल विशेष रूप से प्रचलित है।

3.3.2 –ठेका एवं ठेके के प्रकार

ठेका

धा	धिं	धिं	धा	धा	धिं	धिं	धा	धा	तिं	तिं	ता	धिं	धिं	धा	धा
X				2				0			3				X

प्रकार–

धा धिं धिं धाधा। धा धिं धिं धाधा। धा तिं तिं ताता। ता धिं धिं धाधा।
X 2 0 3
घेना धिंन धिंऽ धाऽ। घेना धिंन धिंऽ ताऽ। केना किन ताऽ। धाऽ घेना धिंन धिंऽ
X 2 0 3
धा धिं नाना धिं। धा धिं नाना धिं। ता तिं नाना तिं। ता धिं नाना धिं।
X 2 0 3
धा ऽ धि ऽ। ध ऽ धिं ऽ। ता ऽ तिं ऽ। धा ऽ धिं ऽ।
X 2 0 3

इस प्रकार आप तीनताल का ठेका एवं ठेके के प्रकार को समझ चुके होंगे। तीनताल ने अपनी वादन संगति का विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। वर्तमान काल में सभी कलाकार शास्त्रीय गायन या वादन विधा में तबल पर तीनताल ही अधिक बजाना पसन्द करते हैं।

3.3.3 संगत में प्रयोग

संगत की व्याख्या, अर्थ अथवा परिभाषा

संगत, संगीत की एक अत्यंत महत्वपूर्ण और व्यापक अवधारणा है, जो दो या अधिक तत्वों के पारस्परिक संयोजन से विकसित होती है। यह केवल संगीत तक सीमित न होकर संसार के जीवन–जगत और पदार्थों की निर्माण प्रक्रिया में भी निहित दिखाई देती है। जब दो वस्तुएँ आपस में जुड़ती हैं, तो उनके बीच सामंजस्य और तालमेल उत्पन्न होता है। इसी प्रक्रिया को 'संगत' अथवा 'सुसंगति' कहा जाता है। अतः संगत का मूल उद्देश्य किसी विशेष रूप के साथ जुड़कर, सहयोग करते हुए अथवा समान गति से आगे बढ़ना होता है।

यदि संगीत के संघटक तत्वों पर विचार किया जाए, तो उसमें स्वर, राग, ताल–लय, पद, बंदिश, अभिनय और नृत्य जैसे अनेक घटक सम्मिलित होते हैं। जब ये सभी तत्व परस्पर एक–दूसरे के साथ समन्वय स्थापित करते हैं या एक–दूसरे को सहयोग प्रदान करते हैं, तब गायन, वादन और नृत्य का संयुक्त स्वरूप उभरकर सामने आता है, जिसे हम संगीत के रूप में

पहचानते हैं। जब स्वर और लय को वाद्य तथा ताल का सहयोग प्राप्त होता है, तब गायन कला का विकास होता है। यही गायन जब पद और बंदिश से संयुक्त होता है, तो संगीत का स्पष्ट स्वरूप बनता है और जब यही संगीत अभिनय के सहयोग से जुड़ता है, तो नृत्य की अभिव्यक्ति सामने आती है।

भरत मुनि, पं. शारंगदेव तथा अन्य अनेक संगीताचार्यों और विद्वानों का मत है कि गायन, वादन और नृत्यकृये तीनों कलाएँ अपने–आप में पूर्ण नहीं हैं। इनकी पूर्णता विभिन्न कलाओं के आपसी सहयोग अथवा 'संगत' से ही संभव होती है। तात्पर्य यह है कि संगत स्वयं में कोई स्वतंत्र कला नहीं, बल्कि अनेक कलाओं के समन्वय से निर्मित एक संयुक्त रूप है। ये सभी कला–तत्व परस्पर पूर्ण रूप से मिलकर संगीत रूपी भव्य संरचना का निर्माण करते हैं।

जब किसी कलाकार की प्रस्तुति के समय अन्य कलाकार रचनात्मक एवं संगीतिक सहयोग प्रदान करते हैं और संपूर्ण कार्यक्रम के दौरान उसके साथ कदम से कदम मिलाकर चलते हैं, तो इस प्रकार के सहयोग को 'संगत' कहा जाता है।

इसे इस प्रकार समझा जा सकता है कि जब हम किसी संगीत कार्यक्रम का आनंद लेने हेतु किसी मंच पर जाते हैं, तो देखते हैं कि मुख्य गायक मंच पर गायन कर रहा होता है। उसके पीछे एक या दो कलाकार तानपूरा लिए बैठते हैं और स्वर आधार बनाए रखते हैं। वहीं अन्य कलाकार हारमोनियम अथवा सारंगी के माध्यम से मुख्य गायक की स्वर–रचना, तानों और गायन शैली का अनुसरण करते हैं, जिससे रचना अधिक सजीव और प्रभावशाली बनती है। इसके अतिरिक्त प्रस्तुति को लयबद्ध एवं आकर्षक बनाने के लिए तबला वादक ताल संगत करता है। इस प्रकार मुख्य गायक के अलावा उपस्थित अन्य कलाकार सहयोगी अथवा संगतकार कहलाते हैं।

इस प्रकार प्रत्येक प्रकार के संगीत कार्यक्रम में संगतकारों की भूमिका अत्यंत आवश्यक होती है। किसी भी संगीतिक प्रस्तुति की सफलता या असफलता बहुत हद तक संगतकारों की दक्षता पर निर्भर करती है। इसी कारण श्रेष्ठ कलाकार अपने कार्यक्रमों के लिए अनुभवी और विश्वसनीय सहयोगी कलाकारों का चयन करते हैं, ताकि प्रस्तुति के दौरान कोई बाधा उत्पन्न न हो और कार्यक्रम स्मरणीय बन सके।

परिभाषा–

'संगत' शब्द 'सम' और 'गत' इन दो शब्दों के संयोग से बना है। 'सम' का अर्थ है–साथ या सहित तथा 'गत' का अर्थ है–चलना या जाना। इस प्रकार 'संगत' का तात्पर्य है–साथ चलना या साथ निभाना।

एक अन्य दृष्टि से 'संगत' शब्द 'सह' और 'योग' से भी संबंधित माना जाता है, जहाँ 'सह' का अर्थ साथ तथा 'योग' का अर्थ जुड़ना या मिलना होता है। अंग्रेज़ी भाषा में संगत के लिए Accompaniment शब्द का प्रयोग किया जाता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि संगीत प्रस्तुति के दौरान मुख्य कलाकार के साथ सहयोगपूर्वक चलना और उसकी कला को सुदृढ़ बनाना ही संगत कहलाता है। संगीत में इस प्रकार मुख्य कला एवं सहयोगी कला, तथा मुख्य कलाकार एवं संगतकार का संबंध स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

तीनताल का (वादन) संगत में प्रयोग–

उदाहरण–

राग यमन में छोटा ख्याल के पूर्ण गायकी में तीनताल का संगत में प्रयोग इस प्रकार से किया जायेगा।

राग यमन में रजाखानी गत

स्थाई

ग म"म" प रे	– सासा नि़ रे	ग – ग रे	ग म"म" प –
दा दिर दा रा	ऽ दिर दा रा	दा ऽ दा रा	दा दिर दा ऽ
म" धध नि सां	– निनि ध प	ग म"म" पप म"म"	ग– गरे –रे सा–
दा दिर दा रा	ऽ दिर दा रा	दा दिर दिर दिर	दाऽ रदा ऽर दाऽ
0	3	**X**	2

अन्तरा

म" गग म" प	– निनि ध नि	सां – सां सां	नि रेंरें सां –
दा दिर दा रा	– दिर दा रा	दा – दा रा	दा दिर दा –
नि रेंरें गं सां सा–	– निनि ध प	ग म"म" पप म"म"	ग– गरे –रे
दा दिर दा रा दाऽ	ऽ दिर दा रा	दा दिर दिर दिर	दाऽ रदा ऽर
0	3	**X**	2

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) तीनताल का परिचय दीजिए।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(क) तीनताल में ..... मात्रा होती हैं।

(ख) तीनताल में ..... ताली होती हैं।

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) तीनताल में कितने विभाग होते हैं?

(ii) तीनताल में कितनी खाली होती हैं?

संदर्भ सूची

1. तबला संगत एवं कलाकार, डॉ. भीमसेन सरल, पन्ना–36
2. तबला पुराण, पं. विजय शंकर मिश्र, पन्ना 160–161
3. तबला संगत एवं कलाकार, डॉ. भीमसेन सरल, पन्ना–37

3.4 तीनताल की लयकारियाँ

यदि कहा जाए कि लय के बिना संगीत संभव नहीं है तो यह कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। समय की समान गति ही लय कहलाती है। लय एवं लयकारी में अन्तर होता है। लय यदि संज्ञा है तो लयकारी क्रिया है। लय और लयकारी दोनों एक–दूसरे पर आश्रित हैं। बिना लय के लयकारी भी सम्भव नहीं है। लय ही लयकारी का आधार है। लय अनेक प्रकार की हो सकती हैं परन्तु बहुत समय पहले से ही संगीत विद्वानों ने मुख्य रूप से इसके तीन प्रकार माने हैं।

1. विलम्बित लय **2.** मध्य लय **3.** द्रुत लय

इसके अतिरिक्त देखा जाए तो अतिविलम्बित या अति द्रुत लय भी होती है परन्तु मुख्य रूप से क्रमशः यह दोनों भी विलम्बित एवं द्रुत के अन्तर्गत आ जाती हैं, इसीलिए इन तीन मुख्य लय प्रकारों को ही सर्वसम्मति से मान्यता प्राप्त है।

अब आप लयकारी को जानेंगे। लयकारी की परिभाषा हम यह दे सकते हैं कि "संगीत में लय के विभिन्न दर्जे करने की क्रिया को लयकारी कहते हैं।" लय के दर्जे करने से तात्पर्य यह है कि कलाकार जब कलात्मक दृष्टि से कभी एक मात्रा में दो, तीन या चार मात्रा तथा कभी दो में तीन, चार में पाँच मात्रा पढ़कर/दिखाकर लय के चमत्कार का प्रदर्शन करता है तो इसी को लयकारी कहते हैं।

लय के समान ही लयकारी के भी विभिन्न प्रकार माने गए हैं परन्तु इसके भी दो मुख्य प्रकार हैं।

एक सीधी लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत दुगुन, चौगुन अठगुन आदि आते हैं। दूसरी आड़ की लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत तिगुन, आड़, कुआड़ तथा बिआड़ आदि लयकारियाँ आती हैं।

लयकारियों के अन्तर्गत बहुत प्रकार की लयकारियाँ हो सकती हैं परन्तु पाठ्यक्रम के अनुसार आप सीधी लयकारियों को ही जान सकेंगे। विभिन्न तालों में सीधी लयकारी से सम्बन्धित दुगुन, चौगुन को आप जानेंगे। तालों में लयकारी करने से पूर्व आड़ लयकारियों के सम्बन्ध में मात्र

एक परिचय जानना आवश्यक सा प्रतीत होता है। सीधी लयकारी के अतिरिक्त अन्य प्रकार की लयकारी को जिसके अन्तर्गत एक मात्रा में डेढ़ मात्रा, तीन मात्रा या सवा मात्रा आदि आते हैं, आड़ की लयकारी कहते हैं। परन्तु व्यापक दृष्टि से वर्तमान में आड़ का व्यापक अर्थ हो चुका है। आड़ का विशेष रूप से यह अर्थ है कि वह लयकारी जिसमें एक मात्रा में डेढ़ या दो मात्रा में तीन मात्रा की लयकारी हो। एक मात्रा में डेढ़ हो या 2 मात्रा में 3 बात एक ही है। इसी प्रकार कुआड़ लयकारी के अन्तर्गत एक मात्रा में सवा मात्रा या 4 मात्रा में 5 मात्रा आती हैं। यह लयकारियाँ कठिन मानी जाती हैं। आप यहाँ तालों में सीधी लयकारी करना जान सकेंगे। तालों के विषय में आप सम्पूर्ण परिचय जान चुके है अब तालों की दुगुन, चौगुन लयकारियाँ जानेंगे।

3.4.1 लयकारियाँ :

ठेका

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता	ता धिं धिं धा	धा
X	2	0	3	X

तीनताल की दुगुनः

धा धिं	धिं धा	धा धिं	धिं धा	धा तिं	तिं ता	ता धिं	धिं धा	
X				2				
धा धिं	धिं धा	धा धिं	धिं धा	धा तिं	तिं ता	ता धिं	धिं धा	धा
0				3				X

दुगुन लयकारी में प्रत्येक दो मात्राओं को एक बना दिया जाता है। जैसा आप पहले जान चुके हैं कि दुगुन लयकारी में एक मात्रा में दो मात्रा बोली जाती हैं। देखा जाए तो दुगुन में ताल दो बार पूरे चक्र के साथ बोली जाती है। दुगुन करते समय मात्राएँ एवं विभागों में कोई परिवर्तन नहीं होता है। मात्र दो बोलों को एक मात्रा मान लिया जाता है जैसा कि आपने तीनताल की दुगुन में देखा। दो मात्रा को एक करने के लिए इसके नीचे अर्द्धचन्द्राकार चिन्ह लगा देते हैं।

दुगुन करने की एक और पद्धति भी होती है जिसे 'एक आवर्तन में दुगुन करना' के नाम से सम्बोधित किया जाता है। आप जान चुके हैं कि पहले जो दुगुन की उसमें ताल का चक्र दो बार अर्थात दो आवर्तन में ताल का प्रयोग किया परन्तु एक आवर्तन में दुगुन करने के लिए मात्रा एवं विभाग तो वैसे ही रहेंगे परन्तु एक विशेष जगह से ताल की दुगुन शुरू की जाएगी तथा ताल की दो बार पुनरावृत्ति नहीं होगी। उदाहरण के लिए आप एक आवर्तन में तीनताल की दुगुन को जानेंगे।

एक आवर्तन में तीनताल की दुगुनः

धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा	धा धिं धिं धा धा धिं धिं धा	धा तिं तिं ता ता धिं धिं धा	धा
X	2	0	3	X

तीनताल की चौगुन लयकारीः

धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	| धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	|	
X				2					
धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	| धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	| धा	
0				3				X	

एक आवर्तन में तीनताल की चौगुनः

धा	धिं	धिं	धा	| धा	धिं	धिं	धा	|
X				2				
धा	तिं	तिं	ता	| धाधिंधिंधा	धाधिंधिंधा	धातिंतिंता	ताधिधिंधा	| धा
0				3				X

तीनताल की चौगुन 13वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 4 मात्राओं में पूरी चौगुन आ जाएगी। चौथे विभाग की चार मात्राओं में चौगुन पूर्ण रूप में आ जाएगी।

दुगुन व चौगुन लयकारी में आप जान चुके हैं कि जो भी लयकारी करनी हो उतनी मात्राएँ एक मात्रा में समायोजित कर दी जाती है। जैसे दुगुन में दो मात्राओं को एक मात्रा बना देते हैं। इसी प्रकार तिगुन एवं चौगुन में क्रमशः तीन मात्रा एवं चार मात्राओं को एक बनाकर लयकारी की जाती है। लयकारी करते समय अधिक मात्राओं को एक मात्रा बनाते समय चिन्हों पर ध्यान देना आवश्यक होता है।

संगीत में विभिन्न लयकारी जैसे दुगुन, तिगुंन, चौगुन, आड, कुआड, एवं बिआड प्रयोग की जाती है।

दुगुन– एक मात्रा मेंदो मात्रा — 1 2   1 2

तिगुन– एक मात्रा मेंतीन मात्रा — 1 2 3   123

चौगुन– एक मात्रा मेंचार मात्रा — 1234   1234

आड– एम मात्रा में डेढ़ मात्रा अथवा दो मात्रा में तीन मात्रा आड लयकारी को ड्योडी लय भी लय कहा जाता हैं एवं इसको 3/2 की लयकारी के रूप में भी व्यक्त करते हैं। — 1 ऽ 2   ऽ 3 ऽ

कुआड– इस लयकारी के विषय मेंदो मत हैं एक–आड की आड को कुआड कहते हैं अतः 9/4,जिसके अनुसार चार मात्रा में नौ मात्रा अथवा एक मात्रा में$2\frac{1}{4}$ अथवा सवा दो मात्रा का प्रयोग करते है। दो – 5/4 की लयकारी अर्थात चार मात्रा में पांच मात्रा अथवा एक मात्रा मेंसवा मात्रा। इस दुसरे मत का अधिक प्रचलन है एवं इसको सवागुन की लय भी कहते हैं।

पहले मत के अनुसार :–

1ऽ ऽ ऽ 2ऽ ऽ ऽ 3	ऽ ऽ ऽ 4 ऽऽ ऽ 5 ऽ	ऽ ऽ 6 ऽ ऽ ऽ 7 ऽ ऽ	ऽ 8 ऽ ऽ ऽ 9 ऽ ऽ ऽ
1	2	3	4

दूसरे मत के अनुसार—:

1 ऽ ऽ ऽ 2 ऽ ऽ ऽ 3 ऽ ऽ ऽ 4 ऽ ऽ ऽ 5 ऽ ऽ ऽ

1 2 3 4

बिआड लय—इस लयकारी के विषय भीदो मत हैं। एक मत के अनुसार कुआड लय की आड बिआड लयकारी होती जिसे$9/4 \times 3/2 = \frac{27}{8}$ के रूप में व्यक्त करते हैं एवं दूसरे मत के अनुसार$7/4$की लयकारी बिआड की लयकारी है। इसमें एक मात्रा में पैने दो गुन मात्रा प्रयोग की जाती है जिसे पौने दो गुन की लयकारी भी कहते हैं।

पहले मत के अनुसार—:

1ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 2 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 3 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 4 ऽ ऽ

ऽऽ ऽ ऽ ऽ 5 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 6 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 7 ऽऽ ऽ ऽ ऽ

ऽऽ 8 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 9 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 10 ऽऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ 11

ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 12 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 13 ऽऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 14ऽ ऽ ऽ

ऽऽ ऽऽ 15 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 16 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 17 ऽऽ ऽ ऽ ऽ

ऽऽ 18 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 19 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 20 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 21 ऽ

ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ 22 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 23 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 24 ऽ ऽ ऽऽ

ऽ ऽ ऽ 25 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 26 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ 27 ऽ ऽ ऽऽ ऽ ऽ ऽ

दूसरे मत के अनुसार—:

1 ऽऽ ऽ 2 ऽऽ ऽ 3 ऽ ऽ ऽ 4 ऽ ऽ ऽ 5 ऽऽ ऽ 6 ऽ ऽ ऽ 7 ऽऽ ऽ

कुआड एवं बिआड में दूसरा मत ही अधिक प्रचलित एवं व्यवहारिक है अतः लयकारी लिपि वद्ध करने में दूसरे मत का ही प्रयोगकरेंगे। आड, कुआड एवं बिआड, लयकारी लिखने के लिए इनकी भिन्न अथवा बटे में दिखाई संख्या से भाग देते हैं। गणित के अनुसार भाग देने में बटे की संख्या उलटी होकर गुणा में बदल दी जाती है।

उदाहरण आड को बट्टा संख्या 3/2 = $1\frac{1}{2}$

आड लयकारी की मात्रा संख्या =ताल की मात्रा × 2/3, किस मात्रा से आरम्भ की जानी है, इसके लिए उपर की संख्या को ताल की मात्रा संख्या से घटाते हैं।

ताल की मात्रा संख्या —ताल की भाग संख्या × 2/3 जो लयकारी लिखनी है। उसमें बट्टा के नीचे वाली राशी में से एक घटाकर उतनी संख्या के अवग्रह लगाते हैं।

उदाहरण—आड की लयकारी—$3/2$ =2—1= 1

कुआड की लयकारी– $5/4 = 4 - 1 = 3$

बिआड की लयकारी– $7/4 = 4 - \overrightarrow{1 = 3}$

अतः आड की लयकारी को मात्रा के साथ एक अवग्रह, कुआड एवं बिआड की लयकारी में तीन अवग्रह लगाते हैं। इसके पश्चात बट्टा की उपरवाली राशि में विभाग बना लेते हैं। सरलता के लिए पीछे से विभाग बनाना शुरू करते हैं एवं पहली मात्रा में जितनी मात्रा कम होती हैं, मात्रा से पहले उतने अवग्रह लगा देते हैं, जो कि आप विभिन्न तालों में लयकारी के उदाहरण से समझेंगे।

<u>तीनताल की आड की लयकारी</u>– $3/2$ मात्रा की लयकारी मे दो मात्रा में तीन मात्रा अथवा एक मात्रा डेढ मात्रा प्रयोग की जाती हैं अतः तीनताल के ठेके को तीन बार प्रयोग किया जाऐगा, जो कि तीनताल के ठेके की दो आवृति में आएगा। एक आवृति में तीनताल की आड $16 \times 2/3 = 10\frac{2}{3}$ मात्रा में आएगी एवं $5\frac{1}{3}$ मात्रा के बाद आरम्भ होगी।

6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16
1धाऽ	धिंऽधिं	ऽधाऽ	धाऽधि	ऽधिंऽ	धाऽधा	ऽतिंऽ	तिंऽता	ऽताऽ	धिंऽधिं	ऽधाऽ

<u>तीनताल की कुआड की लयकारी</u>– $5/4$ अर्थात एक मात्रा में सवा मात्रा अथवा $1\frac{1}{4}$ मात्रा। इसके लिए तीनताल की प्रत्येक मात्रा को चार मात्रा के बनाऐंगे तथा प्रत्येक मात्रा में तीन अवग्रह लगाकर पॉच मात्रा के भागको एक मात्रा में रखेंगे। तीनताल की कुआड $16 \times 4/5 = \frac{64}{5} = 12\frac{4}{5}$ मात्रा की होगी एवं तीनताल की $3\frac{1}{5}$ मात्रा के बाद आरम्भ होगी।

4	5	6	7	8	9
1 धाऽऽऽ	धिंऽऽऽधिं	ऽऽऽधाऽ	ऽऽधाऽऽ	ऽधिंऽऽऽ	धिंऽऽऽध

10	11	12	13	14	15	16
ऽऽऽधाऽ	ऽऽतिंऽऽ	ऽतिंऽऽऽ	ताऽऽऽता	ऽऽऽधिंऽ	ऽऽधिंऽऽ	ऽधाऽऽऽ

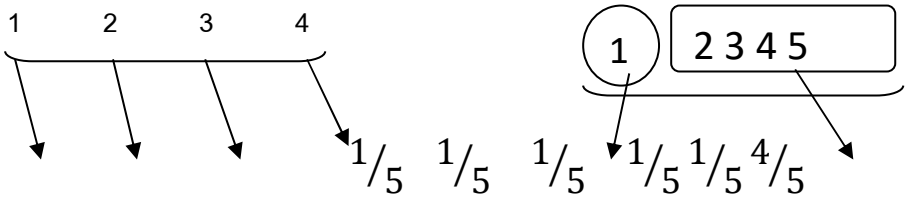

<u>तीनताल की बिआड की लयकारी</u>– $7/4$ अर्थात् चार मात्रा में सात मात्रा। कुआड की भॉति ही प्रत्येक मात्रा के बाद तीन अवग्रह लगाएगे परन्तु बिआड की लयकारी हेतु सात मात्रा के भागों को एक मात्रा में रखेंगे। तीनताल की बिआड $9\frac{1}{7}$ मात्रा की होगी एवं तीनताल की $6\frac{6}{7}$ मात्रा के बाद आरम्भ होगी ।

7	8	9	10	11
ऽऽऽऽऽऽधा	ऽऽऽधिंऽऽऽ	धिंऽऽऽधाऽऽ	ऽधाऽऽऽधिंऽ	ऽऽधिंऽऽऽधा

अभ्यास प्रश्न

1) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

(i) लयकारी से आप क्या समझते है? तीनताल की दुगुन व चौगुन लयकारी लिखिए।

2) लघु उत्तरीय प्रश्न :

(i) तीनताल की चौगुन लयकारी लिखिए।

(ii) तीनताल की दुगुन लयकारी लिखिए।

(iii) लयकारी से आप क्या समझते हैं?

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) तीनताल की चौगुन किस मात्रा से प्रारम्भ होगी?

(ii) चौगुन लयकारी में एक मात्रा में कितनी मात्रा समाहित होती हैं?

(iii) तीनताल की दुगुन कितनी मात्राओं में पूर्ण रूप में आती है?

3.5 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि संगीत के अभिन्न अंग व तालों की उत्पत्ति रागों की रंजकता को बढ़ाने के लिए हुई है। वर्तमान समय में उत्तरी भारत में अनेकों ताल प्रचलित हैं। जैसे – तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, रूपक, धमार, दीपचन्दी आदि। ताल के योग से संगीत में रसानुभूति क्षणिक न रहकर परमानन्द प्राप्ति के साधन में सहायता करती है। पहले गीत रचनाओं एवं तालों से सम्बन्धित सभी अव्यवों को कंठस्थ करना पड़ता था परन्तु तालिपि पद्धति के आने से इस क्षेत्र में क्रान्ति का सूत्रपात हो गया। संगीत के अन्तर्गत आने वाली समस्त स्वर–ताल बद्ध रचनाओं में लय एवं ताल के समस्त अंगों को समझना बेहद आसान हो गया है। गीत रचनाओं में जिस लय एवं ताल में संगत होती है उसमें समान रूप से कायम रहना परम आवश्यक है। विशेष रूप से ख्याल गायन में ताल पक्ष के लिए 'तबला' वाद्य में संगत की जाती है तथा ध्रुपद गायन में 'पखावज' वाद्य में संगत की जाती है। विभिन्न तालों की लयकारी में विभिन्न लयों के मध्यम से चमत्कार का प्रदर्शन किया जाता है। लयकारी द्वारा गीत रचनाओं एवं तालों में कुछ नवीनता आ जाती है जिससे गायन–वादन में नवीन सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। इस इकाई के अध्ययन से आप लय–ताल एवं लयकारी के सम्बन्ध में सभी तत्वों के समुचित प्रयोग को समझ सकेंगे।

3.6 शब्दावली

- **थपिया बाज** : पखावज पर बजने वाली ताले खुले बोल की तालें होती हैं, जिन्हें थपिया बाज की ताल भी कहते हैं। पखावज वाद्य में थाप का विशेष महत्व है। गीला आटा लगाकर इसकी

थाप में विशेष गूंज उत्पन्न हो जाती है। पूरी हथेली से बजने के कारण ही इसकी थाप का विशेष महत्व है और इसे थपिया बाज कहते हैं।

- **धमार गायन :** ध्रुपद एवं ख्याल गायन के मध्य अपनी स्थिति रखने वाला गायन धमार है। ध्रुपद शैली से गाया जाने वाला गीत का प्रकार धमार कहलाता है। विशेष रूप से राधा एवं कृष्ण इस गीत के गायक होते हैं तथा होली के अवसर पर ब्रज की होरी, राधा–कृष्ण एवं गोपियों की होरी, अबीर गुलाल, फाग, पिचकारियाँ, रंगों एवं भीगी चुनरियों का वर्णन इसमें होता है।

3.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.3.1 की उत्तरमाला :

2) एक शब्द में उत्तर दो :

(i) 16
(ii) 03

2)रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :

(क) उत्तर : 4 **(ख)** उत्तर : 1

3.4 की उत्तरमाला :

2)रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :

(क) उत्तर : 1 **(ख)** उत्तर : चार

3)एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : 1
(ii) उत्तर : 4
(iii) 8

3.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पंडित विष्णु नारायण, (1970), *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 एवं भाग 2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।

2. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1990), *राग परिचय भाग 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, (1995), *संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2,* पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
4. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1993), *तबला प्रकाश भाग–1,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

3.9 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, आचार्य गिरीश चन्द्र, (1994), *ताल प्रभाकर प्रश्नोत्तरी,* संगीत सदन प्रकाशन,

इलाहाबाद।

2. कौर, डॉ0 भगवन्त, *परम्परागत हिन्दुस्तानी सैद्धान्तिक संगीत,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

3.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. तीनताल का सम्पूर्ण परिचय देते हुए इनकी दुगुन एवं चौगुन की लयकारियाँ लिखिए।

इकाई 4–एकताल का विस्तृत अध्ययन (ठेका, ठेके के प्रकार, संगत में प्रयोग, विभिन्न प्रकार की लयकारियां)।

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 एकताल का विस्तृत अध्ययन

- 4.3.1 एकताल का सम्पूर्ण परिचय
- 4.3.2 एकताल की लयकारियाँ
- 4.3.3 संगत में प्रयोग

4.4 सारांश

4.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी.ए. संगीत के पाठ्यक्रम बी0ए0एम0वी0(एन)–350 के छठे सेमेस्टर की चौथी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के पश्चात आप बता सकते हैं कि भातखण्डे जी द्वारा निर्मित तालिपि पद्धति में पूर्ण परिचय देते हुए पाठ्यक्रम की तीनताल को लिपिबद्ध करना साथ ही तीनताल की लयकारियाँ को जान चुके होंगे।

प्रस्तुत इकाई में भातखण्डे जी द्वारा निर्मित तालिपि पद्धति में पाठ्यक्रम के एकताल का विस्तृत अध्ययन (ठेका, ठेके के प्रकार, संगत में प्रयोग, विभिन्न प्रकार की लयकारियां समझ सकेंगे।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप एक की तालिपि पद्धति के महत्व को समझ सकेंगे। गीत रचनाओं में एक ताल के प्रयोग एवं उन्हें लिपिबद्ध करने की पद्धति को भी आप समझ सकेंगे।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के बाद आप :–

- बता सकेंगे कि तालिपि पद्धति द्वारा किस प्रकार ताल का क्रियात्मक स्वरुप प्रस्तुत किया जा सकता है।
- ताल सम्बन्धी समस्त तत्वों को समझते हुए उनके प्रयोग सम्बन्धी नियमों को भी जान सकेंगे।
- ताल के लयकारी सम्बन्धी पक्ष को समझते हुए संगीत में इनका प्रयोग कर सकेंगे।

4.3 एकताल का विस्तृत अध्ययन

भारतीय शास्त्रीय संगीत में प्रमुख रुप से तालों में तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, धमारताल, तिलवाड़ा ताल एवं रूपक ताल का प्रयोग होता है। तीनताल एवं एकताल ख्याल गायन में सबसे प्रमुख तथा चारताल ध्रुपद गायन की सबसे प्रमुख ताल है। आप ताल सम्बन्धी सम्पूर्ण तत्वों का अध्ययन कर चुके हैं। अब आप पाठ्यक्रम से सम्बन्धित कुछ तालों की विस्तृत जानकारी प्राप्त करेंगे।

4.3.1 एकताल का सम्पूर्ण परिचय :

मात्रा – 12, **विभाग** – 6, **ताली** – 1, 5, 9 व 11 पर तथा **खाली** – 3 व 7 पर

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	कत	ता	धागे	तिरकिट	धी	ना
×		0		2		0		3		4	

ठेका

परिचय – एकताल में 12 मात्राएँ होती हैं। इसकी 12 मात्राएँ 6 विभागों में बटी रहती हैं। प्रत्येक विभाग 2 मात्रा का होता है। सम प्रथम स्थान, 'धिं' पर होता है। खाली के स्थान दो हैं तथा ताली के स्थान 4 हैं।

ख्याल गायन में 'विलम्बित ख्याल' के अन्तर्गत यह सबसे प्रमुख ताल है। प्रत्येक राग में अनेक बड़े ख्याल एकताल में निबद्ध होते हैं। वर्तमान में अनेक द्रुत ख्याल भी एकताल में निबद्ध हैं। कुछ वर्षों पूर्व एकताल अधिकतर 'विलम्बित ख्याल' में ही प्रयुक्त की जाती थी। एकताल का चक्र घूमता हुआ होता है, जिस प्रकार 'दादरा ताल' का ठेका घूमता हुआ होता है, क्योंकि यह 6 मात्रा की होती है। इसी प्रकार एकताल में ठीक उससे दुगुनी 12 मात्राएँ होती हैं और यह भी घूमती लय में बजती है। ख्याल गायन के क्षेत्र में यह ताल विशेष रूप से प्रयोग की जाती है। विलम्बित ख्याल में यह ताल बहुत धीमी लय में बजती है परन्तु **धागे तिरकिट** जैसे बड़े बोलों के कारण इसके भराव में आसानी हो जाती है। धीमी लय में मात्राओं को भरने के लिए यह बोल सहायता प्रदान करते हैं। ग्वालियर, आगरा, रामपुर एवं दिल्ली घराने के गायक अधिकतर इस ताल में बड़ा ख्याल गाते हैं परन्तु किराना घराने के गायक एकताल में बड़ा ख्याल गाते समय इसकी लय अतिविलम्बित कर देते हैं।

अभ्यास प्रश्न

1) लघु उत्तरीय प्रश्न :।

(i) एकताल का स्वरुप बताइए।

2) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

(क) एकताल में तीसरी मात्रा पर ..... होती है।

(ख) एक ताल ..... मात्रा की होती है।

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) एक में कितनी खाली होती हैं?
(ii) एकताल किस गायन शैली में प्रयुक्त होती है?

4.3.2 एकताल की लयकारियाँ–

यदि कहा जाए कि लय के बिना संगीत संभव नहीं है तो यह कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। समय की समान गति ही लय कहलाती है। लय एवं लयकारी में अन्तर होता है। लय यदि संज्ञा है तो लयकारी क्रिया है। लय और लयकारी दोनों एक–दूसरे पर आश्रित हैं। बिना लय के लयकारी भी सम्भव नहीं है। लय ही लयकारी का आधार है। लय अनेक प्रकार की हो सकती हैं परन्तु बहुत समय पहले से ही संगीत विद्वानों ने मुख्य रूप से इसके तीन प्रकार माने हैं।

1. विलम्बित लय **2.** मध्य लय **3.** द्रुत लय

इसके अतिरिक्त देखा जाए तो अति विलम्बित या अति द्रुत लय भी होती है परन्तु मुख्य रूप से क्रमशः यह दोनों भी विलम्बित एवं द्रुत के अन्तर्गत आ जाती हैं, इसीलिए इन तीन मुख्य लय प्रकारों को ही सर्वसम्मति से मान्यता प्राप्त है।

अब आप लयकारी को जानेंगे। लयकारी की परिभाषा हम यह दे सकते हैं कि "संगीत में लय के विभिन्न दर्जे करने की क्रिया को लयकारी कहते हैं।" लय के दर्जे करने से तात्पर्य यह है कि कलाकार जब कलात्मक दृष्टि से कभी एक मात्रा में दो, तीन या चार मात्रा तथा कभी दो में तीन, चार में पाँच मात्रा पढ़कर/दिखाकर लय के चमत्कार का प्रदर्शन करता है तो इसी को लयकारी कहते हैं।

लय के समान ही लयकारी के भी विभिन्न प्रकार माने गए हैं परन्तु इसके भी दो मुख्य प्रकार हैं।

एक सीधी लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत दुगुन, चौगुन अठगुन आदि आते हैं। दूसरी आड़ की लयकारी होती है जिसके अन्तर्गत तिगुन, आड़, कुआड़ तथा बिआड़ आदि लयकारियाँ आती हैं।

लयकारियों के अन्तर्गत बहुत प्रकार की लयकारियाँ हो सकती हैं परन्तु पाठ्यक्रम के अनुसार आप सीधी लयकारियों को ही जान सकेंगे। विभिन्न तालों में सीधी लयकारी से सम्बन्धित दुगुन, चौगुन को आप जानेंगे। तालों में लयकारी करने से पूर्व आड़ लयकारियों के सम्बन्ध में मात्र एक परिचय जानना आवश्यक सा प्रतीत होता है। सीधी लयकारी के अतिरिक्त अन्य प्रकार की लयकारी को जिसके अन्तर्गत एक मात्रा में डेढ़ मात्रा, तीन मात्रा या सवा मात्रा आदि आते हैं, आड़ की लयकारी कहते हैं। परन्तु व्यापक दृष्टि से वर्तमान में आड़ का व्यापक अर्थ हो चुका है। आड़ का विशेष रूप से यह अर्थ है कि वह लयकारी जिसमें एक मात्रा में डेढ़ या दो मात्रा में तीन मात्रा की लयकारी हो। एक मात्रा में डेढ़ हो या 2 मात्रा में 3 बात एक ही है। इसी प्रकार कुआड़ लयकारी के अन्तर्गत एक मात्रा में सवा मात्रा या 4 मात्रा में 5 मात्रा आती हैं। यह लयकारियाँ कठिन मानी जाती हैं। आप यहाँ तालों में सीधी लयकारी करना जान सकेंगे। तालों के विषय में आप सम्पूर्ण परिचय जान चुके है अब तालों की दुगुन, चौगुन लयकारियाँ जानेंगे।

लयकारियाँ :

ठेका

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	कत	ता	धागे	तिरकिट	धी	ना	धिं
X		0		2		0		3		4		X

एकताल की दुगुनः

धिंधिं	धागेतिरकिट	तूना	कतता	धागेतिरकिट	धीना	
X		0		2		

धिंधिं	धागेतिरकिट	तूना	कतता	धागेतिरकिट	धीना	धिं
0		3		4		X

तीनताल के समान एकताल की दुगुन लयकारी में भी प्रत्येक दो मात्राओं को एक कर दिया जाता है तथा विभागों में मात्रा की संख्या तथा विभागों का स्वरूप एक जैसा रहता है। बस ताल का ठेका दो बार प्रयोग में लाया जाता है। एकताल की दुगुन करने के लिए दूसरे प्रकार को भी प्रयोग में लाया जाता है, जिसमें एक आवर्तन में एकताल की दुगुन की जाती है।

एक आवर्तन में एकताल की दुगुन :

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना	धिंधिं	धागेतिरकिट	तूना	कतता	धागेतिरकिट	धीना	धिं
X		0		2		0		3		4		X

एकताल की दुगुन 7वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 6 मात्राओं में सम्पूर्ण होकर, दुगुन लयकारी आ जाएगी। इसमें एक आवर्तन का ही प्रयोग होगा अर्थात ठेका एक ही बार प्रयोग में आएगा।

एकताल की चौगुन लयकारी – एकताल की चौगुन के लिए चार बार ठेके की पुनरावृत्ति करनी होगी।

धिंधिंधागेतिरकिट	तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना	धिंधिंधागेतिरकिट	
X		0		

तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना	धिंधिंधागेतिरकिट	तूनाकतता	
2		0		

धागेतिरकिटधीना	धिंधिंधागेतिरकिट	तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना	धिं
3		4		X

एक आवर्तन में एकताल की चौगुनः

धिं	धिं	धागे	तिरकिट	तू	ना
X		0		2	
कत	ता	धागे	धिंधिंधागेतिरकिट	तूनाकतता	धागेतिरकिटधीना
0		3		4	X

एकताल की चौगुन 10वीं मात्रा से प्रारम्भ होगी तथा 3 मात्राओं में पूरी चौगुन आ जाएगी।

आड की लयकारी–एक ताल के ठेके में धागे में 'धा' वगे की मात्रा का मूल्य आधी–आधी मात्रा का है एवं तिरकिट में 'ति', 'र', 'कि' 'ट' की प्रत्येक की मात्रा का मूल्य $^1/_4$ मात्रा का है। आड की लयकारी में स्वतंत्र मात्रा जैसे धिं, तू, ना, क एवं ता बोले में एक अवग्रह लगाएगें परन्तु धागे के बोल में 'धा' एवं 'गे' बोलकर प्रथक कर देंगे एवं तिरकिट के बोल को 'तिर' व 'किट'को पृथक कर प्रयोग करेंगे, जो एकताल की आडलयकारी से स्पष्ट हो जाएगा।

5	6	7	8	9	10	11	12
धिऽधि	ऽधागे	तिरकिटतू	ऽनाऽ	कऽता	ऽधागे	तिरकिटधि	ऽनाऽ
2		0		3		4	

एकताल की आड की लयकारी $12\times\frac{2}{3}=8$ मात्रा में आती है एवं पाचवीं मात्रा से आरम्भ कर सम पर आएगी।

कुआड की लयकारी– $^5/_4$ की लयकारी में एकताल की कुआड की लयकारी $12\times\frac{4}{5}=9\frac{3}{5}$ मात्रा की होगी एवं $2\frac{2}{5}$ मात्रा के बाद आरम्भ होकर सम पर आएगी ।

3	4	5	6	7
12धिऽऽ	ऽधिऽऽऽ	धाऽगेऽति	रकिटतूऽ	ऽऽनाऽऽ
0		2		0

8	9	10	11	12
ऽकऽऽऽ	ताऽऽऽधा	ऽगेऽतिर	किटधिऽऽ	ऽनाऽऽऽ
	3		4	

$^2/_5$ —— 1 2 | धिं ऽ ऽ ऽ ना —— $^3/_5$

बिआड की लयकारी– एक ताल की बिआड की लयकारी $12\times\frac{4}{7}=\frac{48}{7}=6\frac{6}{7}$ मात्रा की होगी एवं $5\frac{1}{7}$ मात्रा के बाद आरम्भ होकर सम पर आएगी।

6	7	8	9	10	11	12
ऽधिंऽऽऽधिंऽ	ऽऽधाऽगेऽति	रकिटतूऽऽऽ	नाऽऽऽकऽऽ	ऽताऽऽऽधाऽ	गेऽतिरकिऽधि	ऽऽऽनाऽऽऽ
	0		3		4	

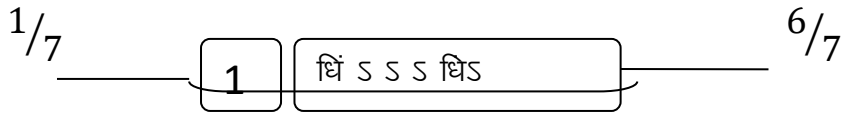

4.3.3 एकताल का (वादन) संगत में प्रयोग–

उदाहरण–

राग यमन में एकताल का संगत में प्रयोग इस प्रकार से किया जाता है।

राग यमन– मध्यलय एकताल

स्थाई

नि़	धध	नि़	रे	ग	–	ग	रे	ग	मंमं	प	ग
दा	दिर	दा	रा	दा		दा	रा	दा	दिर	दा	रा
3		4		X		0		2		0	
ग	मंमं	ध	नि	सां	निनि	ध	प	मं	गग	रे	सा
दा	दिर	दा	रा	दा	दिर	दा	रा	दा	दिर	दा	रा
3		4		X		0		2		0	

अन्तरा

ग	मंमं	ध	नि	सां	–	नि	ध	नि	रेंरें	ग	रे
दा	दिर	दा	रा	दा		दा	रा	दा	दिर	दा	रा
3		4		X		0		2		0	
नि़	रे	नि	सां	निनि	(प)	मंग	प	रे	नि़	रे	सा
दा	दिर	दा	रा	दा	दिर	दा	रा	दा	दिर	दा	रा
3		4		X		0		2		0	

4.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान चुके हैं कि संगीत के अभिन्न अंग व तालों की उत्पत्ति रागों की रंजकता को बढ़ाने के लिए हुई है। वर्तमान समय में उत्तरी भारत में अनेकों ताल प्रचलित हैं। जैसे – तीनताल, एकताल, चारताल, झपताल, रूपक, धमार, दीपचन्दी आदि। ताल के योग से संगीत में रसानुभूति क्षणिक न रहकर परमानन्द प्राप्ति के साधन में सहायता करती है। पहले गीत रचनाओं एवं तालों से सम्बन्धित सभी अव्यवों को कंठस्थ करना पड़ता था परन्तु तालिपि पद्धति के आने से इस क्षेत्र में क्रान्ति का सूत्रपात हो गया। संगीत के अन्तर्गत आने वाली समस्त स्वर–ताल बद्ध रचनाओं में लय एवं ताल के समस्त अंगों को समझना बेहद आसान हो गया है। गीत रचनाओं में जिस लय एवं ताल में संगत होती है उसमें समान रूप से कायम रहना परम आवश्यक है। विशेष रूप से ख्याल गायन में ताल पक्ष के लिए 'तबला' वाद्य में संगत की जाती है तथा ध्रुपद गायन में 'पखावज' वाद्य में संगत की जाती है। विभिन्न तालों की लयकारी में विभिन्न लयों के मध्यम से चमत्कार का प्रदर्शन किया जाता है। लयकारी द्वारा गीत रचनाओं एवं तालों में कुछ नवीनता आ जाती है जिससे गायन–वादन में नवीन सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है। इस इकाई के अध्ययन से आप लय–ताल एवं लयकारी के सम्बन्ध में सभी तत्वों के समुचित प्रयोग को समझ सकेंगे।

4.5 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.4 की उत्तरमाला :

2) एक शब्द में उत्तर दो :

(i) उत्तर : खाली
(ii) उत्तर : 8

3)रिक्त स्थानों की पूर्ति करो :

(क) उत्तर : एक **(ख)** उत्तर : ख्याल

4.5 की उत्तरमाला :

3) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

(i) उत्तर : 4
(ii) उत्तर : तीन मात्राओं में

4.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. भातखण्डे, पंडित विष्णु नारायण, (1970), *हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका भाग 1 एवं भाग 2,* संगीत कार्यालय, हाथरस।

2. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1990), *राग परिचय भाग 2,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. गोवर्धन, श्रीमती शान्ति, (1995), *संगीत शास्त्र दर्पण भाग–2,* पाठक पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
4. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीश चन्द्र, (1993), *तबला प्रकाश भाग–1,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

4.7 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. श्रीवास्तव, आचार्य गिरीश चन्द्र, (1994), *ताल प्रभाकर प्रश्नोत्तरी,* संगीत सदन प्रकाशन, इलाहाबाद।

2. कौर, डॉ0 भगवन्त, *परम्परागत हिन्दुस्तानी सैद्धान्तिक संगीत,* कनिष्का पब्लिशर्स, नई दिल्ली।

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1. एकताल का सम्पूर्ण परिचय देते हुए इनकी दुगुन एवं चौगुन की लयकारियाँ लिखिए।

इकाई 5– अपनी विधा से सम्बंधित संगीत वाद्य का पूर्ण ज्ञान (संरचना, रख– रखाव, वाद्य मिलाने की विधि, प्रस्तुतिकरण में प्रयोग)।

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 भारतीय वाद्यों का वर्गीकरण
5.3.1 तंत्री वाद्य 5.3.3 अवनद्ध वाद्य
5.3.2 सुषिर वाद्य 5.3.4 घन वाद्य
5.4 प्रमुख भारतीय स्वर वाद्यों की संरचना व मिलाने की विधि
5.4.1 स्वर वाद्य – सितार की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र
5.4.2 स्वर वाद्य – बेला/वायलिन की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र
5.4.3 स्वर वाद्य – सारंगी की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र
5.4.4 स्वर वाद्य – तानपुरा की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र
5.5 प्रमुख भारतीय ताल वाद्यों की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र
5.5.1 ताल वाद्य तबला की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र
5.5.2 ताल वाद्य मृदंग/पखावज की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र
5.6 प्रमुख स्वर वाद्यों तथा ताल वाद्यों का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र
5.6.1 स्वर वाद्य सितार का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र
5.6.2 स्वर वाद्य बेला/वायलिन का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र
5.6.3 स्वर वाद्य सारंगी का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र
5.6.4 स्वर वाद्य तानपुरा का संक्षिप्त इतिहास व चित्र
5.6.5 ताल वाद्य तबले का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र
5.6.6 ताल वाद्य मृदंग/पखावज का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र
5.7 सारांश
5.8 शब्दावली
5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
5.10 संदर्भ ग्रंथ सूची
5.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
5.12 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम (**BAMI(N)-350**) के छठे सेमेस्टर की पांचवी इकाई है। इससे पहले की इकाईयों के अध्ययन के बाद आप बता सकते हैं कि संगीत किसे कहते हैं? आप भारतीय संगीत के इतिहास व संगीत की विधाओं से सम्बन्धित मूलभूत परिभाषाओं से भी परिचित हो चुके होंगे।

इस इकाई में भारतीय शास्त्रीय संगीत में उपयोग में आने वाले वाद्य यंत्रों का सविस्तार वर्णन किया गया है। इस इकाई में वाद्य यंत्रों की संरचना को भली–भांति समझाया गया है तथा इन्हे किस प्रकार मिलाया जाता है यह भी इस इकाई में वर्णित है।

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान पाएंगे कि भारतीय शास्त्रीय संगीत के वाद्यों को कितनी श्रेणियों में विभाजित किया गया है। इन वाद्यों की संरचना व मिलाने की विधि से भी आप भली–भांति परिचित हो गए होंगे तथा यह भी जान गए होंगे कि कौन सा वाद्य किस श्रेणी में आता है।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- प्रचलित भारतीय शास्त्रीय संगीत वाद्यों को श्रेणीबद्ध(तंत्रीवाद्य, सुषिर वाद्य, अवनद्ध वाद्य तथा घन वाद्य में) कर सकेंगे।
- विभिन्न स्वर वाद्यों की संरचना, उनको मिलाने की विधि तथा उन वाद्यों के प्रसिद्ध कलाकारों के विषय में जान सकेंगे।
- विभिन्न ताल वाद्यों की संरचना, मिलाने की विधि तथा उनके प्रसिद्ध कलाकारों के विषय में जान सकेंगे।
- इन वाद्यों का उपयोग, वर्तमान में संगीत के किन–किन क्षेत्रों में हो रहा है, इसका ज्ञान भी प्राप्त कर सकेंगे।

5.3 भारतीय वाद्यों का वर्गीकरण

भारतीय वाद्य जिनसे स्वर अथवा स्वरावलियां उत्पन्न कर उनका संगीत में उपयोग किया जाता है, स्वर वाद्य कहलाते हैं। जैसे सितार, सरोद, बांसुरी, संतूर व हारमोनियम आदि। इसी प्रकार ऐसे वाद्य, जिनका उपयोग गायन व स्वर वाद्य की प्रस्तुतियों में लय अथवा गति को सुचारू रखने हेतु किया जाता है, ताल वाद्य कहलाते हैं। जैसे – तबला, पखावज व ढोलक आदि।

5.3.1 तंत्री वाद्य – ऐसे वाद्य यंत्र जिनमें तंतु का प्रयोग होता है, जो कि धातु अथवा तांत से निर्मित होते हैं, तंत्री वाद्य कहलाते हैं। इनमें तंतु अथवा तार में कम्पन से ध्वनि उत्पन्न की जाती है। तंत्री वाद्यों के भी दो प्रकार होते हैं।

तत् वाद्य – ऐसे वाद्य जिनमें तार में कम्पन उत्पन्न करने के लिए किसी कोण(प्लक्ट्म) से आघात कर ध्वनि उत्पन्न की जाती है, तंत्री वाद्य कहलाते हैं। जैसे – सितार, सरोद, गिटार आदि।

सितार

सरोद

गिटार(मोहन वीणा)

वितत् वाद्य – जिनमें तार में कम्पन उत्पन्न करने हेतु धनुष/बो का उपयोग किया जाता है उन्हें वितत् वाद्य कहते हैं। जैसे – वायलिन, सारंगी आदि।

वायलिन

सारंगी

<u>5.3.2 सुषिर वाद्य</u> – ऐसे वाद्य जिनमें ध्वनि उत्पन्न करने हेतु वायु का प्रयोग होता है, सुषिर वाद्य कहलाते हैं। जैसे बांसुरी, शहनाई, हारमोनियम आदि।

<u>बांसुरी</u> <u>शहनाई</u> <u>हारमोनियम</u>

इस प्रकार तंत्री वाद्य एवं सुषिर वाद्य दोनों ही प्रमुख स्वर वाद्य कहलाते हैं।

<u>5.3.3 अवनद्ध वाद्य</u> – ऐसे वाद्य जिनमें चर्म अथवा खाल को किसी लकड़ी, मिट्टी अथवा धातु से निर्मित खोखले आकार में मढ़ कर हथेली की थाप, उंगलियों अथवा डंडियों के प्रहार से ध्वनि उत्पन्न की जाती है, अवनद्ध वाद्य कहलाते हैं। इनका उपयोग संगीत में लय व ताल के लिए होता है। जैसे तबला, मृदंग/पखावज तथा ढोलक आदि। इन्हें ताल वाद्य भी कहा जाता है। तबला तथा मृदंग/पखावज शास्त्रीय ताल वाद्य हैं।

<u>तबला</u> <u>मृदंग/पखावज</u>

<u>5.3.4 घन वाद्य</u> – धातु, पत्थर अथवा काष्ठ आदि से निर्मित वाद्य, जिनमें परस्पर आघात से ध्वनि निकलती है, घन वाद्य कहलाते हैं। जैसे मंजीरा, झांझ तथा करताल आदि। इनका उपयोग भी लय के लिए किया जाता है।

परन्तु यदि इसी प्रकार के विभिन्न वाद्यों से स्वरावलियां अथवा स्वर तरंगें निकलती हों तो ये भी स्वर वाद्य की श्रेणी में आते हैं। जैसे जलतरंग अथवा नलतरंग आदि।

जलतरंग

मंजीरा

अभ्यास प्रश्न

अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

1. कोण(प्लक्ट्रम) से बजने वाले वाद्य .....कहलाते हैं।
2. धनुष (बो) से बजने वाले वाद्य .....कहलाते हैं।
3. अवनद्ध वाद्यों में.....मढ़ा रहता है।
4. भजन–कीर्तन में उपयोगी घन वाद्य.....है।
5. स्वर वाद्य में .....और.....वाद्य आते हैं।

अ) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. तंत्री वाद्य व सुषिर वाद्य का परिचय दीजिए।

5.4 प्रमुख भारतीय स्वर वाद्यों की संरचना व मिलाने की विधि

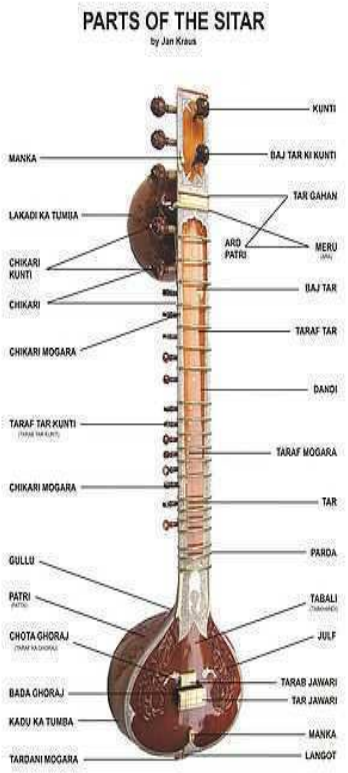

5.4.1 स्वर वाद्य – सितार की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र – सितार भारतीय संगीत का अत्यंत लोकप्रिय वाद्य है। पं0 रविशंकर ने इस वाद्य को सम्पूर्ण विश्व में लोकप्रिय बनाया। सितार के प्रमुख अंग निम्न प्रकार हैं :–

तुम्बा – सितार का निचला भाग जो कि गोल लौकी से बना होता है, तुम्बा कहलाता है।

कील – तुम्बे के नीचे के मध्य भाग में कील होती है जिसमें सितार के तारों को बांधा जाता है। इसे मोंगरा भी कहते हैं।
तबली – तुम्बे के सामने के भाग को काट कर उसे लकड़ी की प्लेट से ढ़क दिया जाता है। इस प्लेट को तबली कहा जाता है।
घुड़च – तबली के उपर लगभग मध्य में एक लकड़ी अथवा हाथी दांत की चौकी होती है, जिस पर तारों के लिए स्थान बना रहता है, इसे घुड़च अथवा ब्रिज कहा जाता है। इसकी उपरी सतह जवारी कहलाती है।
डांड – तुम्बे से जुड़ी एक खोखली लम्बी लकड़ी, जिसमें सितार के पर्दे बांधे जाते हैं, डांड कहलाती है।
गुल – सितार का वह भाग जहां तुम्बा व डांड जुड़ते हैं, गुल कहलाता है।
मनका – सितार के तारों को मिलाने के लिए जो मोती तार में पिरोई जाती हैं, उसे मनका कहते हैं।
परदा – सितार की डांड में पीतल अथवा लोहे की सलाइयों के टुकड़े जो सामने की ओर तांत से बांधे जाते हैं, परदे अथवा सुन्दरी कहलाते हैं। उनके ऊपर तारों को दबाने से इच्छित स्वर प्राप्त किए जाते हैं। इनकी संख्या सोलह से चौबीस होती है।
अटी – सितार के ऊपरी सिरे में हाथी दांत की दो पट्टियां होती हैं। पहली पट्टी जिसके ऊपर तार रखे जाते हैं, अटी कहलाती है।
तार गहन – दूसरी पट्टी जिसके बीच में पतले सुराखों से तार गुजरते हैं तथा खूंटियों से बांधे जाते हैं, तार गहन कहलाता है।
खूटियां – सितार के तारों को कसने के लिए डांड के ऊपरी सिरे में जो लकड़ी की बनी चाबियां होती हैं, खूटियां कहलाती हैं।
तरब – अच्छे सितारों में परदों के नीचे कुछ पतले तारों की पंक्तियां होती हैं। जिन्हें छोटी–छोटी खूंटियों से कसने की व्यवस्था होती है तथा एक छोटा घुड़च भी स्थित होता है। इन पतले तारों को तरब के तार कहते हैं। तरब के तारों को ठीक से मिलाने पर स्वर देर तक गूंजता हैं।

मिजराब – लोहे से बना कोण जिसे दाहिने हाथ की तर्जनी में फंसाकर, तारों में आघात करते हैं, मिजराब कहलाता है।
तार – सितार के मुख्य सात तार होते हैं जिन्हें विभिन्न स्वरों में मिला कर वादन किया जाता है।

सितार की संरचना व अंगों का ज्ञान आपको भली–भांति हो गया होगा। अब आपको सितार को मिलाने की विधि बताते हैं।
सितार मिलाने की विधि – सितार में प्रथम तार को बाज का तार कहते हैं। इसके समीप के दो तारों को जिन्हें जोड़ी के तार कहते हैं, को पहली काली के स्वर में मिलाया जाता है। इस प्रकार दूसरे व तीसरे तार से मंद्र **सा** स्वर उत्पन्न होगा। इस स्वर के अनुसार बाज का तार, मंद्र **म** से मिलाया जाता है तथा बाज के तार में सातवें पर्दे में सा स्वर बजा कर इसका परीक्षण किया जाता है जो कि जोड़ी के तारों के सा से एक सप्तक ऊंचा होगा। बाज के तार में प स्वर बजाकर सितार का चौथा तार स्वर **प** में मिलाया जाता है। इस चौथे तार की सहायता से पांचवा तार अति मंद्र **प** में सरलता से मिलाया जाता है। छठा तार मंद्र **सा**(पहली चिकारी) का होता है। सातवां तार(दूसरी चिकारी), बाज के तार में सा स्वर बजाकर मिला लिया जाता है। तरब के तारों को मिलाने के लिए

विभिन्न परदों की सहायता से निकलने वाले स्वरों के अुनसार, तरब की खूंटियों को कस कर मिलाया जाता है।

सितार के बोल निकालने का तरीका – सितार के तारों में दो तरह से आघात किया जाता है। इस प्रकार मिजराब के आघात से निम्न बोल बनते हैं :–

दा – जब मिजराब द्वारा बाहर से अन्दर की ओर प्रहार किया जाता है तो 'दा' का बोल निकलता है।

रा – जब मिजराब द्वारा भीतर से बाहर की ओर प्रहार किया जाता है तो 'रा' का बोल निकलता है जो 'दा' का विपरीत बोल है।

दिर – जब 'दा' तथा 'रा' बोल को शीघ्रता से बजाया जाता है तो 'दिर' बोल निकलता है।

द्रा – 'दा' तथा 'रा' को मिला कर शीघ्रता से बजाने से 'द्रा' का बोल निकलता है।

5.4.2 स्वर वाद्य–बेला/वायलिन की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र – वायलिन एक तंत्री वाद्य है जो वितत् वाद्य की श्रेणी में आता है, क्योंकि यह गज/धनुष से बजने वाला वाद्य है। अपने वर्तमान स्वरूप में तो इसे यूरोपीय वाद्य कहा जाता है। परन्तु इसके प्रमुख भारतीय वाद्यकार इसे भारतीय वीणा का ही एक प्रकार मानते हैं, जो 'कच्छपी वीणा' के अनुरूप माना जाता है। इसको बजाने के लिए प्रयोग में आने वाला गज/धनुष भारत की ही देन बताया जाता है। प्राचीन काल में

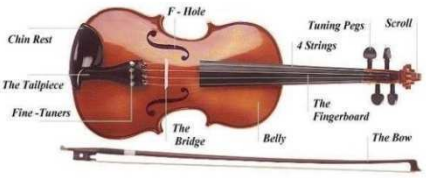

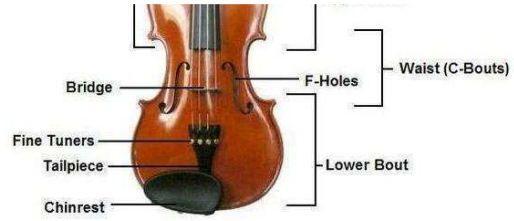

गज से बजायी जाने वाली 'वीणा' भारत में विद्यमान थी।

संरचना – यह वाद्य वर्तमान में इटली व जर्मनी में उच्च कोटि का बनाया जाता है। इसके निर्माण में *तुन* या *सागौन* की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है जो कि 'सीजन्ड वुड' होती है। धूप तथा वर्षा में जो लकड़ी अनेक वर्षो तक पड़ी रही हो तथा जिस पेड़ से यह प्राप्त की गई हो उसके तने के परीक्षण के उपरान्त इसका चुनाव किया जाता है। इसकी ऊपरी प्लेट **'बेली'** कहलाती है तथा नीचे वाली प्लेट **'बैक'** कहलाती है तथा इन दोनों 'प्लेटों' को वक्राकार पट्टी जिसे **'रिब्ज'** कहते हैं, से लकड़ी की पतली पट्टी **'लाइनिंग'** के माध्यम से जोड़ दिया जाता है। इसके ऊपरी भाग 'बेली' में ध्वनि के कम्पनों को प्रभावी बनाने हेतु दो *'साउन्ड होल'* बने होते हैं जो कि अंग्रेजी अक्षर **'एफ'** आकृति के होते हैं। यह पूरा भाग इसका 'साउन्ड–बॉक्स' होता है। इसके लम्बाई वाले एक छोर में 'रिब्ज' में एक 'बटन' होता है जिसकी सहायता से आबनूसी लकड़ी का एक टुकड़ा जिसे **'टेलपीस'** कहते हैं जुड़ा रहता है। इसमें 4 तारों को पिरोने के लिए छिद्र तथा *'एडजस्टर्स'* लगे रहते हैं। 'बेली' में दूसरे छोर में लकड़ी की पतली डांड जो 'बेली' से जुड़ी होती है **'नैक'** कहलाती है। इसके अंतिम सिरे को **'स्क्रौल'** कहते हैं। इसके समीप तारों को कसने के लिए चार **'पैग्स'** होती है। 'बेली' के 'साउन्ड्स होल्स' के बीच में ब्रिज रहता है जिसके ऊपर से चार तार 'एडजस्टर्स' से चलकर दूसरे छोर में 'पैग्स' के छिद्र में पिरोए जाते हैं। तारों के ही ठीक नीचे आबनूसी लकड़ी की पट्टी होती है जिसे **'फिंगर बोर्ड'** कहते हैं। 'पैग्स' के समीप एक नट से होकर चारों तार जाते हैं। दूसरे

छोर में 'टेलपीस' के समीप **'चिनरेस्ट'** होता है, जो खड़े होकर बजाने में सुविधा हेतु लगा रहता है। 'साउन्ड्स होल' के समीप 'बेली' तथा 'बैक' प्लेट्स के मध्य लकड़ी का पतला स्तम्भ खड़ा रहता है जिसे **'साउन्ड पोस्ट'** कहते हैं।

वायलिन को बजाने हेतु लम्बी बैंत की लकड़ी जिसे **'स्टिक'** कहते हैं का प्रयोग होता है। इसके एक सिरे में 'नट' होता है जिससे होकर घोड़े के बाल लम्बाई में दूसरे छोर में 'पाइन्ट' तक तने रहते हैं। इनको नियन्त्रित करने हेतु एक **'स्क्रू'** पहले छोर में 'नट' के समीप होता है। इस पूरे भाग को गज अथवा बो/धनुष कहते हैं। इसके बालों को वायलिन के तारों में घर्षण से ध्वनि उत्पन्न होती है। आप चित्र देखकर आसानी से गज संचालित कर वायलिन से ध्वनि निकाल सकेंगे।

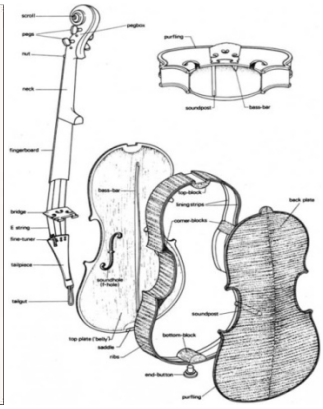

मिलाने की विधि – इसमें चार तार बाएं से दायीं ओर **जी, डी, ए, ई** होते हैं। पहले तीन तार काइल्ड के होते हैं तथा चौथा तार स्टील का पतला तार होता है।

वायलिन मिलाने की तीन प्रमुख विधि है, जिसमें तारों को निम्न प्रकार मिलाते हैं –

तार का नाम		जी	डी	ए	ई
प्रथम विधि	–	*प़*	*सा*	*प*	*सा*
द्वितीय विधि	–	*सा़*	*प़*	*सा*	*प*
तृतीय विधि	–	*म़*	*सा*	*प*	*रें*

उत्तर भारत में अधिकतर पहली अथवा तीसरी विधि से तथा दक्षिण भारत में दूसरी विधि से वायलिन के तार मिलाए जाते हैं। पहली तथा तीसरी विधि में वायलिन के दूसरे तार को हारमोनियम के पांचवे काले या पहले सफेद अथवा पहले काले से मिलाया जाता है जो कि 'सा' का तार होता है। इसमें गज/धनुष चलाने पर **सा** की ध्वनि, इसी तार में 'नट' से दो अंगुल ऊपर तर्जनी अंगुली के सिरे से तार को दबाकर तथा गज चलाने पर **'रे'** स्वर प्राप्त होता है। 'रे' से दो अंगुल ऊपर

मध्यमा से दबाने पर **'ग'** स्वर तथा उसके ऊपर मध्यमा से सटा कर 'अनामिका' से दबाने पर **'म'** स्वर निकाला जाता है।

इसी प्रकार तीसरे तार को कस कर प में मिलाया जाता है। फिर दूसरे तार में अंगुली संचालन की विधि के अनुसार तीसरे तार में तर्जनी से **'ध'** स्वर, मध्यमा से **'नि'** स्वर तथा अनामिका से **'सां'** प्राप्त होता है।

वायलिन वाद्य में ख्याल, गत, गीत, भजन सभी आसानी से बजाए जा सकते हैं। परन्तु इसके लिए सर्वप्रथम स्वर ज्ञान व अच्छा अभ्यास होना आवश्यक है।

5.4.3 स्वर वाद्य – सारंगी की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र – स्वर वाद्य सारंगी भारतीय संगीत का अत्यंत महत्वपूर्ण वाद्य है। परन्तु इसके कलाकार धीरे–धीरे दुर्लभ होते जा रहे हैं। यह एक कठिन तथा श्रमसाध्य वाद्य है परन्तु इसकी ध्वनि उतनी ही मधुर तथा मानव कंठ के अत्यधिक निकट है।

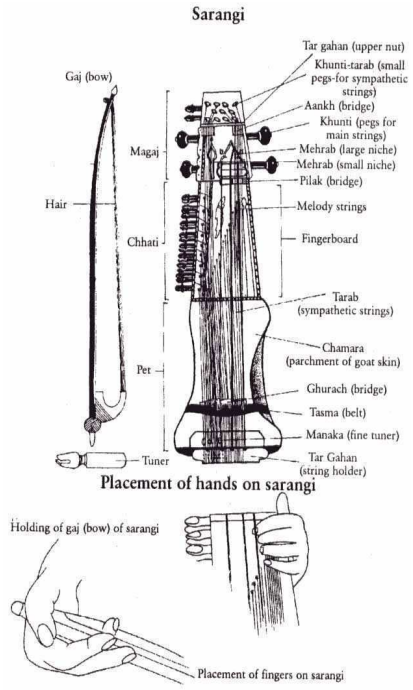

संरचना – सारंगी वाद्य साल, सागौन अथवा तुन की लकड़ी को खोद कर बनाई जाती है। इसका आकार लगभग 24–25 इंच लम्बा होता है। इसका निचला सिरा थोड़ा चौड़ा तथा ऊपरी सिरा थोड़ा संकरा होता है। निचले सिरे का सामने वाला भाग डमरू की आकृति का तथा पिछला भाग चपटा होता है। सामने वाला भाग खाल/चमड़े से मढ़ा होता है। इसे 'मन्धान' कहते हैं। इसके ऊपर घुड़च रखा जाता है जिससे होकर तार दूसरे सिरे पर खूंटियों तक जाते हैं। सारंगी का मध्य भाग इसकी **'छाती'** कहलाता है। इसको बजाने के लिए **गज/धनुष** का प्रयोग किया जाता है, जो कि लकड़ी की डंडी में एक नट की सहायता से घोड़े की पूंछ के बालों से निर्मित होती है। इन बालों में *'बिरौजा'/ रेजिन* घिस कर गज को सारंगी के तारों के ऊपर चलाने से ध्वनि प्राप्त होती है। सारंगी के मुख्य तार तांत के बने होते हैं। अन्य तार स्टील के बने होते हैं, जिन्हें तरब कहते हैं। इनकी संख्या ग्यारह से बाइस तक होती है।

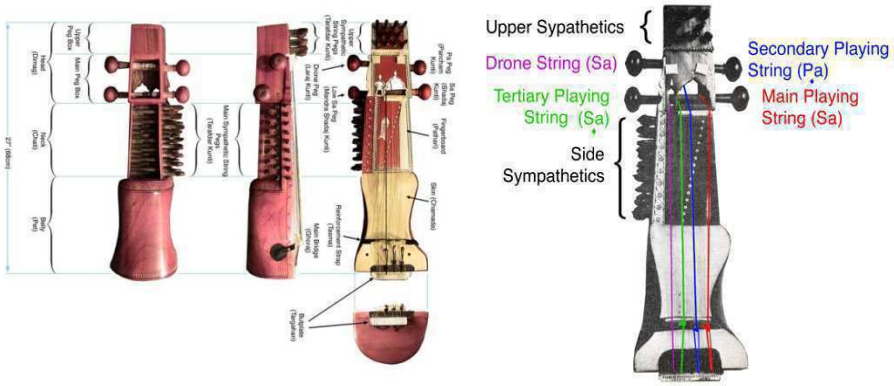

मिलाने की विधि – सारंगी के मुख्य तांत के तारों को **सा, प** तथा **सा** स्वरों में मिलाते हैं। चौथे तार को **ग** अथवा **म** स्वर मे मिलाया जाता है। इनका आधार हारमोनियम का पहला या दूसरा काला होता है। तरबों के तारों को राग में प्रयुक्त होने वाले स्वरों के अनुरूप मिलाया जाता है जिससे अनुगूंज प्राप्त होती है। सारंगी में बाएं हाथ की अंगुलियों तर्जनी, मध्यमा तथा अनामिका के नाखून वाले पृष्ठ भाग को तारों में सरका कर स्वरों की उत्पत्ति की जाती है। इसमें तारों को दबाया नहीं जाता है। गज को दाहिने हाथ से पकड़ कर प्रयोग में लाया जाता है। आप चित्र देखकर यह सीख सकते हैं।

5.4.4 स्वर वाद्य – तानपुरा की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र – स्वर वाद्य तम्बूरा अथवा तानपुरा भारतीय संगीत में गायन में प्रयुक्त होने वाला प्रमुख संगत वाद्य है। आप किसी भी शास्त्रीय संगीत के गायक अथवा गायिका को अपना गायन प्रस्तुत करते समय, उसको स्वयं अथवा किसी सहयोगी को तम्बूरा बजाते हुए सदैव देखेंगे। यह अत्यंत प्राचीन वाद्य है।

तम्बूरा/तानपुरा की संरचना – तम्बूरा/तानपुरे को अथवा इनके चित्र को देख कर आप समझ जाएंगे कि तम्बूरे का निचला गोलाई वाला भाग **तूम्बा** कहलाता है। यह भाग गोल लौकी का बना होता है। इसे सुखा कर साफ करके प्रयोग में लाते हैं। यह खोखला होता है।

तबली : तूम्बे के सामने के भाग को काटकर सपाट बना दिया जाता है तथा उसके ऊपर लकड़ी से निर्मित गोलाकार प्लेट रख दी जाती है जिसे तबली कहते हैं।

घुड़च या ब्रिज : तबली के ऊपर लगभग मध्य में हाथी दांत अथवा प्लास्टिक की सफेद सतह वाली लकड़ी की एक छोटी चौकी होती है, जिसे घुड़च अथवा ब्रिज कहते हैं।

कील अथवा मोंगरा : तूम्बे के आधार में एक कील लगी होती है, जिसमें तम्बूरा के तार बांधे जाते हैं। इसे मोंगरा या लंगोट भी कहते हैं।

गुल : तूम्बे के ऊपरी हिस्से को जहां पर डांड़ से जोड़ा जाता है उसे 'गुल' कहते हैं।
डांड : यह तम्बूरे का मध्य व ऊपरी लम्बा भाग होता है। यह लकड़ी को पोलीश कर बनाया जाता है। इसका निचला सिरा गुल के स्थान पर तूम्बे से जुड़ा रहता है। ऊपर के भाग में चार खूंटियां होती हैं। घुड़च या ब्रिज से होकर खूंटियों तक चार तार डांड के ऊपर तने रहते हैं।
अटी या अटक : तम्बूरे के तार डांड के ऊपरी सिरे में खूंटियों से पहले हाथी दांत से निर्मित एक खड़ी पट्टी पर बराबर अंतर पर रखे जाते हैं, जिसे अटी या अटक कहते हैं।
तार गहन : अटी के समीप ही ऊपर की ओर हाथी दांत से निर्मित एक अन्य प्लेट होती है जिसमें चार छिद्र बराबर दूरी में होते हैं। इनसे होकर तार खूंटियों में पहुंचते हैं, इसे तार गहन कहते हैं।
खूंटियां : तारों को कसने के लिए तम्बूरे में डांड के ऊपरी सिरे में चार खूंटियां होती हैं।
मनका : तारों को मिलाने के पश्चात सूक्ष्म अंतर को ठीक करने हेतु मनकों/मोतीयों को आगे–पीछे सरकाया जाता है। उनको घुड़च अथवा ब्रिज तथा कील के मध्य पिरोया जाता है।

मिलाने की विधि : तम्बूरे या तानपुरे दो आकार में प्राप्त होते हैं – बड़े आकार का तम्बूरा पुरूषों के लिए तथा छोटे आकार का महिलाओं के लिए प्रयोग में आता है। पुरूषों के तम्बूरे में पहला व अंतिम तार पीतल का तथा मध्य के दोनों तार स्टील के होते हैं। महिलाओं के तम्बूरे में अंतिम तार पीतल का तथा अन्य तीनों स्टील के होते हैं।

तम्बूरे के मध्य के दोनों तारों/जोड़ी के तारों को मध्य सा मे मिलाया जाता है। पुरूषों के लिए हारमोनियम का पहला काला तथा महिलाओं के लिए चौथा काला स्वर सामान्यतः **'सा'** होता है। प्रथम तार पंचम का तार कहलाता है। इसे मंद्र पंचम में मिलाया जाता है तथा अंतिम तार मंद्र षडज में मिलाया जाता है। इसे सामान्य भाषा में 'खरज' भी बोला जाता है।

तम्बूरा बजाने के भिन्न–भिन्न तरीके हैं। भूमि में अथवा गोद में उर्ध्व रख कर या भूमि में लिटा कर। इसके पंचम के तार को मध्यमा से तथा शेष तीन तारों को तर्जनी से छेड़ा जाता है। अभ्यास से शीघ्र ही गायन के अनुरूप एक वातावरण उत्पन्न हो जाता है। प्रथम तार को पंचम के अतिरिक्त मध्यम अथवा निषाद स्वर में रागों के अनुरूप मिलाया जाता है।

अभ्यास प्रश्न

अ) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

1) सितार बजाने के लिए उपयोग में आने वाला कोण क्या कहलाता है?
2) सितार में 'दा' तथा 'रा' बोलों को शीघ्रता से बजाने पर क्या बोल निकलता है?
3) वायलिन का भारतीय नाम क्या है?
4) तानपुरा अथवा सितार की तबली के ऊपर रखी जाने वाली लकड़ी की हाथी दांत लगी चौकी को क्या कहते हैं?
5) तानपुरे के जोडी के तारों को किस स्वर में मिलाया जाता है?
6) वायलिन के चारों तारों के नाम बताइए।

ब) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1) अपने वाद्य की संरचना को संक्षेप में बताइए।

2) अपने वाद्य को मिलाने की विधि का वर्णन कीजिए।

5.5 प्रमुख भारतीय ताल वाद्यों की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र

भारतीय संगीत में प्रमुख रूप से शास्त्रीय गायन, वादन व नृत्य की संगति हेतु तथा एकल/सोलो वादन हेतु जो ताल वाद्य प्रयोग में आते हैं वे हैं तबला, पखावज अथवा मृदंग तथा ढोलक। लोक संगीत में अन्य प्रकार के ताल वाद्य प्रयोग में आते हैं। तबला व ढोलक का उपयोग भी लोक संगीत में किया जाता है।

5.5.1 ताल वाद्य तबला की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र – तबला भारतीय संगीत का अत्यंत लोकप्रिय वाद्य है। तबला, दाहिना और बांया दो अलग–अलग संरचनाओं का संयुक्त रूप है। सामान्यतः दाहिने को तबला तथा बांए को डग्गा कहते हैं। दोनों संरचनाओं को एक साथ 'तबला जोडी' कहा जाता है।

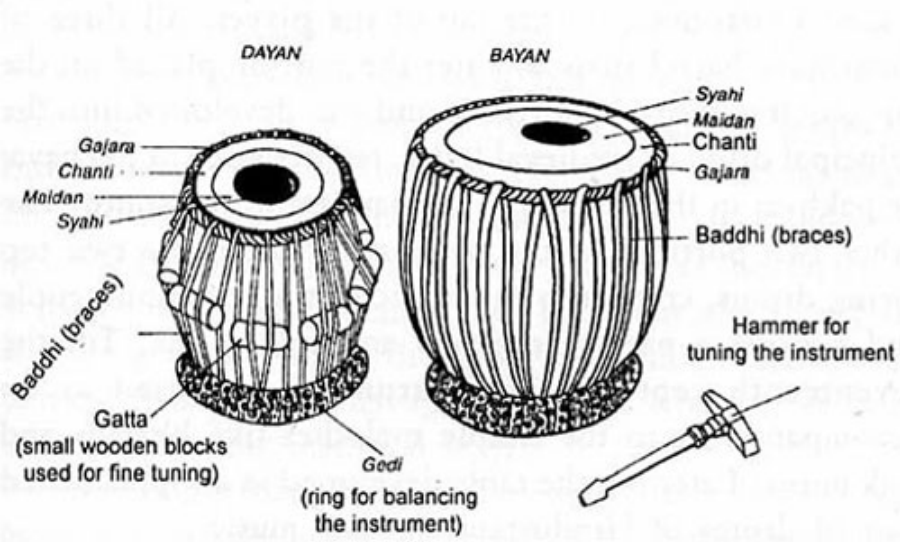

दाहिने (तबला) की संरचना :

काठ – विजय साल, सागौन, आम अथवा कटहल की लकड़ी का तना लगभग आधा खोखला कर यह बनता है। यह बेलनाकार आकृति का होता है जिसकी ऊपरी गोलाई लगभग छः इंच तथा नीचे की गोलाई लगभग नौ इंच होती है।

पूड़ी – इस काठ के मुंह को चमड़े से मढ़ दिया जाता है जिसे पूड़ी कहते हैं। यह बकरे की खाल से निर्मित होती है तथा लकड़ी के ऊपरी खुले मुंह पर बद्दी से कसी रहती है।

गजरा – पूड़ी के चारों ओर चमड़े की मोटी किनार होती है जिसे गजरा कहते हैं। इसके सोलह छिद्रों में से बद्दी प्रवेश करती है।

चांटी – पूड़ी के अन्दर की ओर किनारे–किनारे लगी चमड़े की पट्टी को चांटी कहते हैं।

स्याही – चमड़े की पूड़ी के बीचों–बीच चांटी से एक इंच भीतर की ओर चन्द्राकार गोलाई में मसाले(लौह चूर्ण) की काली आकृति होती है जिसे स्याही कहते हैं। स्याही की पतली सतह से ऊंचा स्वर तथा मोटी सतह से नीचा स्वर प्राप्त होता है। स्वर का ऊंचा–नीचा होना तबले की पूड़ी के व्यास पर भी निर्भर होता है।

लौ या लव – चांटी और स्याही के बीच खाली स्थान को लव या मैदान कहते हैं।

बद्दी – चमड़े की लम्बी पट्टियां जिनसे पूड़ी कसी रहती है, बद्दी कहलाती है।

गट्टा – दाहिने तबले की बद्दी के बीच में लकड़ी के तीन इंच लम्बे बेलनाकार आठ गुटके फंसाए जाते हैं जिन्हें गट्टे कहते हैं। गट्टे खिसकाने पर तबले का स्वर बदल जाता है।

गुड़री – तबले के निचले हिस्से या पैंदे पर एक चमड़े का घेरा होता है जिसके सहारे तबला जमीन पर टिका रहता है, गुड़री कहलाता है। तबले की बद्दियाँ पूड़ी और गुड़री के मध्य कसी रहती है तथा बीच में गट्टे फंसे रहते हैं।

बांया(डग्गा) की संरचना – डग्गा या बांया मिट्टी, स्टील अथवा तांबे का बना होता है। अब मिट्टी के बांए का प्रयोग कम दिखाई देता है। यह चौड़े मुंह का अर्द्ध गोलाकार आकृति का होता है, इसे कूड़ी भी कहते हैं।
पूड़ी – दाहिने तबले की तरह इसके मुंह में भी पूड़ी कसी रहती है जो ज्यादा विस्तृत होती है। इसमें भी चांटी, लव और स्याही, दाहिने तबले की तरह होती है।
गोट – पूड़ी में चारों तरफ अन्दर की ओर लगी पट्टी गोट कहलाती है।
स्याही – पूड़ी में ऊपर की ओर चंद्राकार काली आकृति को स्याही कहते हैं जिसमें मसाले(लौह चूर्ण) का प्रयोग होता है।
लव – चांटी और स्याही के बीच खाली स्थान को लव अथवा मैदान कहते हैं।
गजरा – दाहिने के समान डग्गे में भी चमड़े की बनी हुई मोटी किनार को गजरा कहते हैं।
डोरी – पूड़ी को कसने के लिए साधारणतया चमड़े की बद्दी होती है। परन्तु बांए में डोरी का प्रयोग भी कसने के लिए दिखाई देता है जिसमें छल्ले लगे होते हैं।
गुड़री – डग्गे की पेंदी में चमड़े का घेरा होता है, जिसे गुडरी कहते हैं। पूड़ी तथा गुडरी के मध्य बद्दी या डोरी कसी रहती है।

तबला मिलाने की विधि – तबला मिलाने के लिए हथौड़ी की आवश्यकता होती है। सर्वप्रथम गट्टों को चारों तरफ से ठोककर इच्छित स्वर में मिला लिया जाता है फिर सूक्ष्म अंतर को ठीक करने के लिए गजरे को ठोक कर मिला लिया जाता है।

पुरूषों के कण्ठ संगीत तथा सितार, सरोद के लिए सामान्यतः पहली काली का तबला रखा जाता है। महिलाओं के गायन हेतु चौथा या पांचवीं काली का तबला रखा जाता है। छोटे मुंह वाले तबले ऊंचे स्वर तथा चौड़े मुंह वाले तबले नीचे स्वर में बोलते हैं।

बांए को दाहिने तबले के अनुकूल बनाने हेतु केवल गजरे को ठोक कर व्यवस्थित कर लिया जाता है।

5.5.2 ताल वाद्य मृदंग/पखावज की संरचना, मिलाने की विधि एवं चित्र – भारतीय संगीत में गम्भीर गायन – ध्रुवपद/धमार तथा सुरबहार आदि वाद्य यंत्रों के साथ ही साथ नृत्य की संगति के लिए भी पखावज अथवा मृदंग का प्रयोग होता रहा है। पखावज अथवा मृदंग प्राचीन ताल वाद्यों में से है। इसका एकल/सोलो वादन भी चमत्कारिक व प्रभावोत्पादक होता है।
पखावज/मृदंग की संरचना – पखावज अथवा मृदंग लकड़ी का बना होता है। पखावज लगभग 2 फिट 2 इंच लम्बा होता है, जो खोखला होता है। शीशम, खैर अथवा विजयसाल की लकड़ी के पखावज सर्वोत्तम माने गए हैं। पखावज की संरचना केवल एक इकाई के रूप में होती है जो बेलनाकार आकार वाली होती है। इसके दाहिने मुंह का व्यास लगभग 6–7 इंच होता है जिसमें पूड़ी कसी रहती है। इसे दाहिना कहते हैं। इसका बांया मुंह लगभग 9–10 इंच व्यास का, पूड़ी से ढका रहता है। दाहिने एवम् बांए की पूड़ी बद्दी से कसी रहती है तथा बीच की बाहरी सतह में आठ लकड़ी के 'गट्टे' इसमें फंसे रहते हैं।

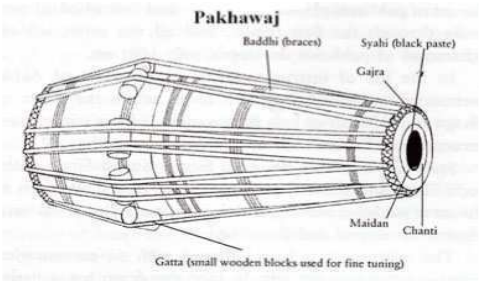

मृदंग/पखावज की दांयी पूड़ी के भाग :–

चांटी – पूड़ी के अंदर की ओर किनारे–किनारे लगी चमड़े की पट्टी को चांटी कहते हैं।

स्याही – पूड़ी के बीचों बीच मसाले(लौह चूर्ण) से निर्मित 'काली चंद्राकार' आकृति स्याही कहलाती है।

लव या लौ – चांटी और स्याही के मध्य के खाली स्थान को लव या मैदान कहते हैं।

गजरा – पूड़ी के चारों ओर चमड़े की मोटी किनार होती है जिसे गजरा कहते हैं।

बांए पूड़ी के भाग :

गोट – पूड़ी में चारों तरफ अन्दर की ओर लगी पट्टी गोट कहलाती है।

गजरा – पूड़ी के चारों तरफ चमड़े की मोटी किनार गजरा कहलाती हैं।

मैदान – बांए पूड़ी के मध्य जहां पर बजाने से पूर्व आटा चिपकाया जाता है तथा गोट के मध्य का खाली स्थान मैदान कहलाता है।

पखावज की बांयी पूड़ी सादी रहती है और वादन के पूर्व जौं या गेहूं का आटा गूंथ कर चन्द्राकार आकृति में बीच में चिपका दिया जाता है। वादन के उपरान्त खुरच कर निकाल लिया जाता है।

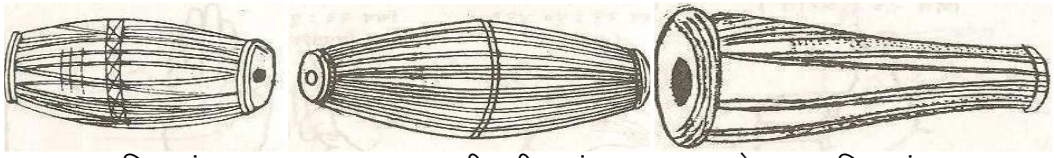

यवाकृति मृदंग | हारीतकी मृदंग | गोपुच्छाकृति मृदंग

पखावज/मृदंग मिलाने की विधि – पखावज को सामान्यतः षडज(सा) या प स्वर में मिलाते हैं। जिन रागों में प स्वर वर्जित होता है उनकी संगत के लिए इसे सा अथवा म में मिलाया जाता है। गट्टों को हथौड़ी के आघात से बीच में व्यवस्थित कर चढ़ाया जाता है तथा उतारने के लिए गट्टों को बांयी पूड़ी की ओर खिसकाया जाता है। ध्वनि के सूक्ष्म अन्तर हेतु गजरे पर हथौड़ी से प्रहार कर पखावज को मिलाया जाता है।

बांए को मिलाने हेतु गुंथे हुए आटे को कम या अधिक मात्रा में बांयी पूड़ी में चिपका कर दांयी पूड़ी के स्वर के अनुकूल बनाया जाता है। उतारने के लिए अधिक तथा चढ़ाने के लिए कम आटे का प्रयोग होता है।

पखावज को बैठ कर(पालथी लगाकर) बजाया जाता है तथा दाहिना मुंह थोड़ा उठा कर रखा जाता है।

अभ्यास प्रश्न

अ) सत्य/असत्य लिखें :

1. तबला एकांगी ताल वाद्य है।
2. ध्रुवपद/धमार गायकी में पखावज की संगति होती है।
3. पखावज के दाहिने भाग पर आटा गूंथ कर लगाया जाता है।
4. तबला जोडी के बांए भाग को डग्गा भी कहते हैं।

ब) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. तबले की संरचना का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

2. पखावज का परिचय दीजिए।

5.6 प्रमुख स्वर वाद्यों तथा ताल वाद्यों का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र

भारतीय संगीत में वाद्य संगीत की भी अपनी विशिष्ट एवं समृद्धशाली परम्परा है। प्राचीन काल में संगीतज्ञ गायन के साथ–साथ वीणा वादक के रूप में भी प्रतिष्ठित थे, जो बीते जमाने में बीनकार के रूप में जाने जाते रहे तथा विख्यात हुए। इन वाद्यों में से कुछ प्रमुख वाद्य यंत्रों का इतिहास, उनके कलाकारों का विवरण तथा चित्र आपके ज्ञान की वृद्धि हेतु प्रस्तुत किए जा रहे हैं। स्वर वाद्यों के साथ ही ताल वाद्यों के इतिहास, कलाकारों का विवरण व चित्रों का भी अवलोकन आप सरलतापूर्वक कर सकेंगे।

5.6.1 स्वर वाद्य सितार का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र – सितार भारतीय संगीत का अत्यंत लोकप्रिय एवं सुरीला वाद्य यंत्र है। सितार की उत्पत्ति के विषय में भिन्न–भिन्न मत हैं। एक मतानुसार सप्ततंत्री वीणा का यह वर्तमान स्वरूप है। दूसरे मतानुसार अमीर खुसरो को सितार का आविष्कारक माना गया है। फारसी में सेह–तार अर्थात तीन तार वाला वाद्य कलान्तर में सितार के नाम से जाना जाने लगा। एक अन्य मतानुसार इसे ईरानी साज माना जाता है। भारतीय संगीत में मुगलों के शासन काल में इस्लामी संस्कृति का भी प्रभाव पड़ा किन्तु सितार का स्वरूप, भारतीय वाद्यों की विशेषता के फलस्वरूप एक भारतीय वाद्य के रूप में ही प्रतिष्ठित है। भारतीय वाद्यों में घुड़च का चपटा होना तथा जो हड्डी अथवा हाथी दांत से बनाया जाता है एक विशेषता होती है, जो सितार में परिलक्षित है। इसके अतिरिक्त परदों एवं चिकारी की व्यवस्था सितार को भारतीय वाद्य के रूप में स्थापित करती है। तेरहवीं शताब्दी से सितार के प्रचलन की मान्यता है। सोलह–सत्रह परदों का सितार चलथाट का सितार कहलाता था जिसमें विकृत स्वरों की प्राप्ति के लिए परदों को सरकाना पड़ता था। सितार के स्वरूप में संशोधन एवं विकास का क्रम चलता रहा। तीन तारों से बढ़कर सात मुख्य तारों के रूप में इसमें परिवर्तन हुआ। बाईस परदों वाले सितार का प्रचलन भी आरम्भ हुआ जिसे अचल–थाट का सितार कहा जाता है। बीसवीं शताब्दी तक सितार पर्याप्त रूप से विकसित व लोकप्रिय हो चुका था। अनुगूंज के लिए इसमें तरबों का उपयोग किया जाने लगा तथा सितार की आस तथा तारता के गुण को बढ़ाने के लिए वैज्ञानिक उपाय सिद्धहस्त कारीगरों द्वारा खोजे गए।

पहले सुरबहार वाद्य में आलाप–जोड़ का काम करने के पश्चात सितार में गतें बजाई जाती थी। परन्तु सितार में भारतीय वाद्य संगीत की सभी विशेषताओं का निरूपण हो जाने के कारण इसमें गम्भीर आलाप चारी, जोड़–आलाप, मींड़, गमक, कृन्तन तथा मंद्र व तार स्थानों में भी ध्वनि प्रसार की सहज अभिव्यक्ति संभव होने के कारण यह वाद्य विश्व के संगीताकाश में अत्यंत लोकप्रिय हुआ है।

सितार को अपनी कला व भावाभिव्यक्ति का आधार बना कर इसके कलाकारों ने अत्यंत धैर्य व लगन से संगीत साधना का क्रम जारी रखा। उसी का परिणाम है कि आज सितार तथा भारतीय संगीत को विश्व में उल्लेखनीय स्थान प्राप्त हुआ है। वर्तमान युग के प्रमुख सितार वादकों में भारत रत्न स्व0 पं0 रविशंकर, स्व0 उस्ताद विलायत खां, उस्ताद हलीम जाफर खां, स्व0 पं0 निखिल बनर्जी, पं0 देवव्रत चौधरी, उस्ताद शुजात खां, उस्ताद शाहिद परवेज तथा पं0 बुद्धादित्य मुखर्जी का सितार वादन के क्षेत्र में बहुमूल्य योगदान है।

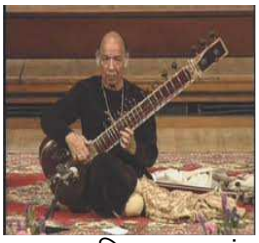

पं0 रविशंकर उस्ताद विलायत खां पं0 निखिल बनर्जी

उस्ताद शाहिद परवेज उस्ताद शुजात खां

5.6.2 स्वर वाद्य बेला/वायलिन का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र – विश्व में वायलिन/बेला ही एकमात्र ऐसा अद्भुत वाद्य यंत्र है जो प्रायः हर देश में लोकप्रिय है। पाश्चात्य देशों में इस वाद्य यन्त्र के विकास हेतु गहन अनुसन्धान हुए जिसका परिणाम है कि वायलिन यूरोप, अमरीका, चीन, जापान, रूस, मध्य एशिया सहित भारत में भी लोकप्रिय हो गया। वायलिन वाद्य को भारतीय संगीतज्ञों ने जिस प्रकार हाथों हाथ लिया उसका कारण यह है कि यह भारतीय संगीत की कर्नाटकी एवं हिन्दुस्तानी दोनों शैलियों के समस्त अंग–प्रत्यंगों को भली–भांति अभिव्यक्त करने में सक्षम है।

वायलिन अथवा बेला की उत्पत्ति पर विचार करने पर भारतीय संगीतज्ञ यह निष्कर्ष निकालते हैं कि वायलिन भारतीय प्राचीन वाद्य, पिनाकी एवम् कच्छपी वीणा के सम्मिश्रण से विकसित वीणा का वर्तमान स्वरूप है। यह प्रमाणित है कि भारत में 'वीणा' के अनेक प्रकार प्राचीन काल से ही प्रचलित थे। वायलिन के आकार को देखने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि यह कच्छप अथवा कछुआ की ही आकृति का वाद्य है। इसके अतिरिक्त धनुष अथवा गज से बजने वाले वाद्य यंत्रों का प्रचलन भारत में वैदिक काल से था। भारत के पश्चात गज वाद्यों का प्रयोग अफगान व अरब–तुर्क देशों द्वारा अपनाया गया। इसके पश्चात पाश्चात्य देशों में लगभग बारहवीं शताब्दी में इसका प्रयोग आरम्भ हुआ। इस प्रकार यात्रा करते करते इस वाद्य का अपना वर्तमान स्वरूप पाश्चात्य देशों में इसके विकास के उपरान्त प्राप्त हुआ। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वायलिन का मूल आधार भारतीय होने के पश्चात भी अपने वर्तमान स्वरूप में इसको विकसित एवं लोकप्रिय करने में पाश्चात्य संगीतज्ञों एवम् कारीगरों का मुख्य योगदान है। इटली के 'गैसपारो वर्त्तोलेत्ती' (1540–1667) तथा एन्ड्रिया एमटि (1537–1611) यूरोप में वायलिन के श्रेष्ठतम घराने हैं। जर्मनी, फ्रान्स तथा यू.के. में भी वायलिन निर्माण व वादन की परम्पराएं हैं, परन्तु इटली के घराने सर्वश्रेष्ठ माने गए हैं। यूरोप में निकालो पाग्नीनी ने अठारवीं शताब्दी में सफल सोलो वायलिन वादन आरम्भ किया। इस प्रकार वायलिन यूरोप में संगति वाद्य के रूप में, आर्केस्ट्रा के प्रमुख वाद्य के रूप में तथा सोलो प्रस्तुति में सफलतापूर्वक प्रयोग में आ रहा है। इतने वर्षों में यह वाद्य पूरे विश्व में लोकप्रिय हो गया है। भारत में जब यूरोपीय व्यापारिक कम्पनियां आई तभी सत्रहवीं, अठारहवीं शताब्दी में इसका प्रयोग दक्षिण भारत से आरम्भ हुआ। कर्नाटकी संगीतज्ञों ने इस वाद्य की विशेषताओं को परख कर इसके उपयोग की भारतीय शैली विकसित की। धीरे–धीरे यह वाद्य उत्तर भारत में भी लोकप्रिय हो गया।

भारत में वायलिन के श्रेष्ठ पुरूष कलाकारों में पं0 पी0ए0एस0 अय्यर, उस्ताद अलाउद्दीन खां, पं0 गोपाल कृष्णन, पं0 टी0एन0 कृष्णन, पं0 लालगुडी जयरामन, पं0 गजानन राव जोशी, पं0 वी0जी0 जोग, पं0 डी0के0 दातार तथा डा0 एल0 सुब्रह्मण्यम आदि तथा महिला वायलिन वादिकाओं में डा0 एन0 राजम, सुश्री शिशिर कर्णधार चौधरी, श्रीमती स्वागता घोष, श्रीमती संगीता राजम, श्रीमती कला रामनाथ आदि प्रमुख हैं।

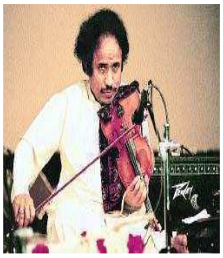

डा0 एन0 राजम पं0 वी0जी0 जोग डा0 एल0सुब्रह्मण्यम

पं0 गोपाल कृष्णन पं0 लालगुडी जयरामन

5.6.3 स्वर वाद्य सारंगी का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र – स्वर वाद्य सारंगी भारत का एक कर्णप्रिय वाद्य यंत्र है जो भारत में लोक वाद्य व शास्त्रीय वाद्य के रूप में प्रतिष्ठित है। यह वाद्य यंत्र राजस्थान, पंजाब व उत्तराखण्ड के लोक कलाकारों, जोगी, फकीरों आदि का प्रिय वाद्य रहा है। लोक गायन, शास्त्रीय गायन के अतिरिक्त ठुमरी व गजल गायकी के कलाकार सारंगी की संगति में अपनी प्रस्तुति से नए आयाम छूने में सफल होते हैं। तबला व पखावज के कलाकार अपने हुनर को सारंगी से निकले लहरे या नगमे की धुन से जोड़ कर ही अपनी धाक जमाने में सफल होते रहे हैं। कथकनृत्य की आमद व गत–भावों का स्वप्निल कला संसार सारंगी के सुरों की कशिश में ही साकार होता है।

सारंगी के प्रादुर्भाव के विषय में कुछ संगीतज्ञ तेरहवीं शताब्दी के प्रसिद्ध ग्रंथ 'संगीत रत्नाकर' में शारंगदेव द्वारा वर्णित 'सारंगयालापिनी' को सारंगी वाद्य के संदर्भ से जोड़ते हैं। 'रावणहस्तवीणा' का नवीन संस्करण 'सारंगी' को माना जाता है। जैसा कि हम जानते है भारत में तंत्री वाद्यों को 'वीणा' के विभिन्न प्राचीन रूपों से ही जोड़ा जाता है। 'आइने अकबरी' में अबुलफजल ने 'सारंगी' का उल्लेख किया है कि सारंगी आकार में रबाब से छोटी है और इसे 'धिच्च्क' की तरह बजाते हैं। 'धिच्च्क' पर्शियन रबाब की तरह का वाद्य है जिसे गज या धनुष से बजाया जाता है। लंदन में अल्बर्ट म्यूजियम में मुगल कालीन पेंटिंग में सारंगी बजाते एक फकीर का चित्र है। प्रसिद्ध संगीत प्रेमी बादशाह मुहम्मद शाह 'रंगीले' के समय की पुस्तक 'मुरक्क–ए–देहली' में प्रसिद्ध सारंगी–वादक गुलाम मुहम्मद का जिक्र है। 'सारंगी' को पूर्व में 'सौरंगी' भी कहा जाता था क्योंकि संगीत के सौ रंग दिखाने में सारंगी सक्षम मानी जाती थी।

'सारंगी' दरबारों में गायक, वादकों तथा नर्तकों के प्रिय वाद्य के रूप में प्रतिष्ठित रहा। दरबारों के अवसान के पश्चात देशी रियासतों में इसको संरक्षण मिलता रहा। परन्तु कुछ काल तक यह वेश्याओं व मुजरे की संगति में प्रयोग में रहने के कारण इस वाद्य यंत्र की प्रतिष्ठा धूमिल हुई। कालान्तर में यह वाद्य अपनी खूबी व रंगत के कारण पुनः संगीतज्ञों के मध्य लोकप्रिय हो गया तथा समाज में प्रतिष्ठित स्थान पाने में समर्थ हुआ। हमारे देश के प्रसिद्ध गायक उस्ताद अब्दुल करीम खां तथा उस्ताद बड़े गुलाम अली ने अपनी संगीत यात्रा सारंगी वादक के रूप में आरम्भ की। आज यद्यपि सारंगी के कलाकार काफी कम हैं परन्तु जो कलाकार इस वाद्य यंत्र को सहेजे हुए हैं उनका सम्मान राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय मंचों में हो रहा है।

सारंगी के प्रमुख कलाकारों में उ0 अली बख्श, उ0 साबिर अली, उ0 बुन्दु खां, उ0 हुसैन बख्श, उ0 गुलाम साबिर, उ0 सुल्तान खां, पं0 रामनारायण, पं0 गोपाल मिश्र तथा पं0 हनुमान प्रसाद मिश्र प्रमुख नाम हैं। कुछ युवा सारंगी वादक इस दुर्लभ वाद्य को नयी ऊंचाई देने हेतु साधनारत हैं।

उ0 साबिर अली

उ0 सुल्तान खां

उ0 बुन्दु खां

5.6.4 स्वर वाद्य तानपुरा का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र – स्वरवाद्य तम्बूरा या तानपुरा भारतीय संगीत का अत्यंत महत्वपूर्ण संगत वाद्य यंत्र है। इस वाद्य यंत्र के अभाव में भारतीय कंठ संगीत (गायन) की कल्पना असंभव है। वैदिक काल में 'वीणा' के अनेक प्रकार अथवा स्वरूपों का विवरण प्राप्त होता है जिनमें समवेत स्वरों के माध्यम से 'वैदिक मंत्रों' (ऋचाओं) का गायन होता था। भारतीय संगीत के तंत्री वाद्यों में 'तूम्बे' का प्रमाण सूत्र काल 200 ई0पू0 में प्राप्त होता है।

तूम्बा गोल लौकी के बड़े आकार को सूखाकर प्राप्त किया जाता है। यह एक प्राकृतिक ध्वनि विस्तारक है जिसका उपयोग भारतीय संगीतज्ञों द्वारा किया जाता है। उत्तर भारत के संगीतज्ञ, प्रकृति प्रदत्त इस तुम्बे का प्रयोग तम्बूरा (तानपुरा) अथवा सितार में इसकी कोमल प्रकृति के बावजूद करते हैं। तूम्बा कहीं भी टकराने पर टूट जाता है। अतः इसका प्रयोग सावधानीपूर्वक करना होता है। दक्षिण भारत में लकड़ी को खोद कर ही तूम्बे का आकार देकर इसका प्रयोग वाद्य यंत्रों में किया जाता है।

कुछ संगीतकार इस वाद्ययंत्र का मूल अरब के वाद्य यंत्र 'तुनबर' तथा ग्रीस के 'किनरह' को बताते हैं। परन्तु यह अवधारणा प्रासंगिक नहीं लगती क्योंकि भारत में वैदिक काल से विभिन्न प्रकार की वीणाओं के प्रयोग के प्रमाण हैं। जिनमें धनुर्वीणा व दण्ड वीणा के स्वरूप संथाल जनजाति के वाद्य यंत्र 'बुआंग' तथा तमिल लोक वाद्य 'बिलाड़ी–वाद्यम' तथा ''बिल्ला–यल'' में खोजे गए हैं।

प्राचीन ग्रंथों में तुम्बरू ऋषि को नारद के समकालीन तथा संगीतज्ञ के रूप में वर्णित किया गया है। कुछ संगीतकारों का मत है कि 'तम्बूरा' 'तुम्बरू वीणा' का ही वर्तमान स्वरूप है। 'अमरकोष', हरिवंश पुराण, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों के अध्ययन से यह विदित होता है कि तूम्बी युक्त वीणाओं का प्रयोग सूत्रकाल 200 ई0पू0 के पश्चात भी दूसरी शताब्दी व आगे के काल में प्रचलित रहा। इसे अलाबू वीणा कहा जाता था, जो कालान्तर में तूम्बी वीणा के नाम से जाना जाने लगा।

तम्बूरा अथवा तानपुरा अपने वर्तमान स्वरूप में लगभग सोलहवीं शताब्दी में प्रयोग में लाया जाने लगा। एकल गायन प्रस्तुति के लिए एक उत्कृष्ट वाद्य यंत्र की तीव्र आवश्यकता के रूप में तम्बूरा अथवा तानपुरा की उत्पत्ति तथा विकास हुआ। ध्रुवपद गायन तथा खयाल गायन की भारतीय परम्पराओं के अनुसार इसमें समुचित संशोधन किए जाते रहे।

वर्तमान काल में यद्यपि इलैक्ट्रोनिक तानपुरा प्रचलन में है परन्तु परम्परागत तम्बूरा/तानपुरा का कोई विकल्प नहीं है। भारत के वैज्ञानिक सर सी0वी0 रमन तथा प्रो0 यशपाल भी भारतीय तम्बूरे की ध्वनि विस्तारक क्षमता, घुड़च तथा जवारी की विशिष्टता को भारतीय ऋषियों की समृद्धशाली परम्परा का द्योतक मानते हैं।

तानपुरा छेड़ना यद्यपि अत्यंत सरल सी प्रक्रिया लगती है परन्तु इसको कलात्मक शैली से छेड़ने हेतु अभ्यास की आवश्यकता होती है। हथेली व उंगलियों में लोच होना तथा चारों तारों को छेड़ने में समुचित अंतराल से स्वरमय वातावरण उत्पन्न करने हेतु सत्त अभ्यास की आवश्कता होती है। तानपुरा छेड़ने के दो तरीके प्रचलन में हैं – एक भूमि के समानान्तर तम्बूरा को रख कर, दूसरा भूमि के उर्ध्व दिशा में तानपुरा को गोद में रखकर छेड़ना। इसके लिए आवश्यक है कि तानपुरा जिस स्थिति में मिलाया गया हो उसे उसी स्थिति में छेड़ना चाहिए, जो आप पूर्व के चित्रों को देखकर सीख सकते हैं।

5.6.5 ताल वाद्य तबले का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र – तबला वाद्य भारतीय संगीत का प्रमुख अवनद्ध वाद्य है। भारतीय संगीत में लय एवं ताल को आधार प्रदान करने में यह वाद्य अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ है। वर्तमान युग में गायन, वादन तथा नृत्य के प्रदर्शन की कल्पना तबला वाद्य के बिना अधूरी व निष्प्राण है।

प्राचीन काल में भारत में दुर्दुर, भेरी, ढ़ोल, नगाड़ा, पखावज व मृदंग प्रमुख ताल वाद्य रहे हैं। तबले के जन्म के विषय में संगीतकारों के विभिन्न मत हैं। एक मतानुसार तबला प्राचीन तालवाद्य दुर्दुर का आधुनिक संस्करण माना गया है। फारसी शब्द 'तब्ल' से तबले की उत्पत्ति का मत कुछ संगीतकार व्यक्त करते हैं। 'तबल' एक प्रकार का नगाड़ा था जिसका उपयोग युद्ध के समय जोश उत्पन्न करने हेतु किया जाता था। प्रसिद्ध संगीतज्ञ अमीर खुसरो खाँ (अमीर खुसरो द्वितीय) को तबला का अविष्कार माना गया, परन्तु कालान्तर में इस अवधारणा को संगीतकारों द्वारा नकार दिया गया। सुल्तान गयासुद्दीन बलबन के शासन काल में तबला वाद्य के समान तालवाद्य के चित्र, जो संगीत दरबार में कलाकारों द्वारा प्रयोग में लाए गए, चित्रित किए गए हैं। संगीतकारों का मत है कि तेरहवीं शताब्दी से तबला वाद्य का प्रयोग आरम्भ हुआ जो पहले लोक वाद्य के रूप में प्रचलन में था। संगीतज्ञ खुसरो खाँ तथा सिद्धार खाँ द्वारा तबले को परिष्कृत कर वर्तमान स्वरूप प्रदान किया गया। अठारहवीं शताब्दी तक यह वाद्य लोकप्रिय हो गया।

तबले के प्रमुख घराने निम्न है :–

दिल्ली घराना – दिल्ली घराना उ0 सिद्धार खाँ द्वारा स्थापित किया गया था। इस घराने में उ0 हबीबुद्दीन खाँ, उ0 मुनीर खाँ, उ0 अहमदजान थिरकवा व पं0 निखिल घोष प्रमुख कलाकार हुए हैं। वर्तमान में उ0 शफात अहमद व उ0 फैयाज खां इस घराने के प्रमुख कलाकार हैं।

अजराड़ा घराना : मेरठ के समीप अजराड़ा घराने की नींव उ0 मीरु खाँ तथा उ0 कल्लू खाँ द्वारा रखी गई। उस्ताद हबीबुद्दीन खाँ इस घराने के प्रमुख तबला वादक हुए हैं। वर्तमान में प्रो0 सुधीर सक्सेना व उ0 रमजान खाँ इस घराने के प्रमुख कलाकार हैं।

लखनऊ घराना – उस्ताद मोंदू खाँ व बख्शू खाँ इस घराने के संस्थापक माने गए हैं। उ0 आबिद हुसैन, उ0 मुन्ने खाँ, उ0 वाजिद हुसैन, उ0 आफाक हुसैन, पं0 बीरू मिश्र इस घराने के प्रमुख तबला वादक हुए हैं। वर्तमान में उ0 आफाक हुसैन के पुत्र उ0 इलमास हुसैन व पं0 स्वपन चौधरी इस घराने के प्रमुख कलाकार हैं।

फर्रूक्खाबाद घराना – उ0 हाजी विलायत अली खाँ द्वारा इस घराने को स्थापित किया गया। उस्ताद मुनीर खाँ, उ0 मसीत खाँ, उ0 करामतउल्ला खाँ, उ0 थिरकवा इस घराने के प्रमुख तबला वादक हुए हैं। वर्तमान में उ0 साबिर खाँ व पं0 अनिन्दो चटर्जी इस घराने के प्रमुख कलाकार हैं।

बनारस घराना – पंडित राम सहाय द्वारा स्थापित यह घराना उत्तर भारत का अत्यंत प्रसिद्ध घराना है। जिसमें पं0 भैरव सहाय, पं0 अनोखे लाल, पं0 कंठे महाराज, पं0 सामता प्रसाद, पं0 किशन महाराज आदि प्रसिद्ध तबला वादक हुए हैं। वर्तमान में पं0 राम कुमार मिश्र व पं0 कुमार बोस इस घराने के प्रमुख कलाकार हैं।

पंजाब घराना – एक मतानुसार उस्ताद हुसैन बखश को इस घराने का संस्थापक माना जाता है तथा दूसरे मतानुसार लाला भवानीदास को। उ0 कादिर बख्श, उ0 अल्ला रक्खा इस घराने के प्रसिद्ध तबला वादक हुए है। वर्तमान में उ0 जाकिर हुसैन इस घराने के प्रमुख कलाकार हैं।

उ0 शफात अहमद
(दिल्ली घराना)

प्रो0 सुधीर सक्सेना
(अजराडा घराना)

पं0 स्वपन चौधरी
(लखनऊ घराना)

उ0 साबिर खां
(फर्रुखाबाद घराना)

पं0 राम कुमार मिश्र
(बनारस घराना)

उ0 जाकिर हुसैन
(पंजाब घराना)

5.6.6 ताल वाद्य मृदंग/पखावज का संक्षिप्त इतिहास, कलाकार व उनके चित्र – ताल वाद्य मृदंग/पखावज की उत्पत्ति प्राचीन वाद्य त्रिपुष्कर से मानी गयी है। उस काल में मृदंग का निर्माण मिट्टी से होता था। पुराणों में इस वाद्य का वर्णन प्राप्त होता है। विघ्न विनाशक गणपति इस वाद्य के वादक माने गए हैं। प्राचीन वाद्य त्रिपुष्कर का आंकिक माग द्विपार्श्वमुखी था अर्थात इस वाद्य को सामने अथवा अंक (गोद) में लिटाकर बजाते थे। 'आंकिक' से ही मृदंग/पखावज का विकास हुआ। भरत के युग में 'आंकिक' को 'मृदंग' कहा जाने लगा। मध्य युग में मृदंग अथवा पखावज के निर्माण में लकड़ी का उपयोग आरम्भ हुआ। ध्रुवपद–धमार गायकी में मृदंग/पखावज की संगति प्रचलित रही है।

मृदंग के बांए मुख में गेहूँ अथवा जौं के गुंथे आटे का प्रयोग वादन के समय किया जाता है। मृदंग अथवा पखावज के बोल अत्यंत गम्भीर व प्रभावोत्पादक होते हैं। मृदंग/पखावज से ही तबला वाद्य की उत्पत्ति मानी गई है, जो आधुनिक भारतीय संगीत का प्रमुख ताल वाद्य है। मृदंग/पखावज एकांगी वाद्य है जबकि तबला द्विअंगी वाद्य है। परन्तु दोनों वाद्य एक ही गोत्र के माने गए है। मृदंग/पखावज के घराने अधिकांश कलाकारों के नाम से है। जैसे – कुदऊसिंह का घराना, नाना पानसे का घराना। कुदऊसिंह के घराने के पखावजी पं0 अयोध्या प्रसाद जी व पं0 रमाकान्त पाठक हुए हैं। अयोध्या के श्री रामशंकर दास 'पागलदास', पं0 अखिलेश गुन्डेचा तथा श्री छत्रपति सिंह भी पखावज/मृदंग के प्रमुख कलाकार हुए हैं।

पं0 रमाकान्त पाठक

पं0 अखिलेश गुन्डेचा

अभ्यास प्रश्न

अ) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

1. भारत रत्न से सम्मानित सितार वादक कौन हैं?
2. वायलिन की प्रमुख महिला कलाकार कौन हैं?
3. प्रसिद्ध वादक उस्ताद जाकिर हुसैन किस घराने के कलाकार हैं?
4. 'पागलदास' जी किस वाद्य से सम्बन्धित हैं?
5. तबले के कितने घराने हैं?
6. सितार को पहले क्या कहा जाता था?
7. प्राचीन वाद्य पिनाकी एवं कच्छपी वीणा के सम्मिश्रण का वर्तमान स्वरुप कौन से वाद्य को माना जाता है?
8. एक मतानुसार तुम्बरु वीणा का वर्तमान स्वरुप कौन सा वाद्य है?

ब) लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. सितार के इतिहास को संक्षेप में बताइए।
2. बेला/वायलिन के इतिहास को संक्षेप में बताइए।

5.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान चुके होंगे कि भारतीय वाद्यों को कितनी श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है। आप प्रमुख भारतीय स्वर व ताल वाद्यों की संरचना व मिलाने (टयुनिंग) की विधि को भी भली–भांति समझ चुके होंगे। इन भारतीय वाद्यों के संक्षिप्त इतिहास व उनके प्रमुख कलाकारों से भी आप परिचित हो चुके होंगे। इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप भारतीय संगीत की ओर आकृष्ट होंगे तथा प्रमुख कलाकारों के प्रदर्शन को सुनने व देखने हेतु प्रेरित होंगे।

5.8 शब्दावली

1.	आंकिक	–	अंक अथवा गोद में
2.	द्विपार्श्वमुखी	–	दोनो ओर (दांए–बांए) मुख वाला
3.	परोधा–पंडित	–	पुरोहित
4.	चल–थाट सितार	–	जिस सितार में सारिकाओं (परदों) को खिसकाना पड़ता है।

5.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

उत्तरमाला 1.3 :

अ)रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

1. तत वाद्य 2. वित्त वाद्य 3. चमड़ा 4. मंजीरा 5. तंत्री व सुषिर वाद्य

उत्तरमाला 1.4 :

अ)एक शब्द में उत्तर दीजिए :

1. मिजराब 2. दिर 3. बेला 4. घुड़च(ब्रिज)
5. मध्य सा 6. जी, डी, ए व ई

उत्तरमाला 1.5 :

अ) सत्य/असत्य लिखें :

1. असत्य 2. सत्य 3. असत्य 4. सत्य

उत्तरमाला 1.6 :

अ) एक शब्द में उत्तर दीजिए :

1. पं0 रविशंकर 2. डॉ0 एन0 राजम 3. पंजाब घराना 4. पखावज
5. छः(6) 6. सेह तार 7. वायलिन 8. तम्बुरा

5.10 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. श्रीवास्तव, प्रो0 गिरीश चन्द्र, *ताल परिचय भाग–1,* संगीत सदन प्रकाशन, साउथ मलाका, इलाहाबाद।
2. देवांगन, श्री तुलसी राम, *बेला वादन शिक्षा,* संगीत प्रेस, 88 साउथ मलाका, इलाहाबाद।
3. श्रीवास्तव, प्रो0 हरीशचन्द्र, *राग परिचय भाग–1,* संगीत सदन प्रकाशन, साउथ मलाका, इलाहाबाद।
4. निगम, श्री वी0एस0, *संगीत कौमुदी भाग–2,* सिटीजन प्रेस, भूसा मंडी–अमीनाबाद, लखनऊ।
5. साभार गूगल।

5.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री

1. वसन्त, *संगीत विशारद,* संगीत कार्यालय, हाथरस (उ0प्र0)।
2. *संगीत* मासिक पत्रिका, संगीत कार्यालय, हाथरस (उ0प्र0)।

5.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. भारतीय वाद्यों का वर्गीकरण किस प्रकार किया गया है? समझाइए। स्वर वाद्य व ताल वाद्य के प्रमुख कलाकारों के नाम अलग–अलग सूची बना कर लिखिए।

इकाई 6– संगीत का मानव जीवन में महत्व (सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रभावना आदि पहलुओं पर आधारित) ।

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 संगीत का मानव जीवन में महत्व सामाजिक
6.3.1 मनोवैज्ञानिक
6.3.2 सांस्कृतिक
6.3.4 राष्ट्रभावना

6.4 सारांश
6.5 शब्दावली
6.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
6.8 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्री
6.9 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई बी0ए0 संगीत के पाठ्यक्रम **BAMI(N)-350** के छठे सेमेस्टर की छठी इकाई है। इससे पूर्व की इकाईयों में आपको रागों और तोलों के अध्ययन के बारे में जानकारी प्राप्त हुई होगी।

इस इकाई में संगीत का मानव जीवन में महत्व (सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रभावना आदि के बारे में अध्ययन कर इसकी सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :–

- संगीत के सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक महत्व को समझना।
- विभिन्न प्रकार के संगीत और उनके जीवन पर प्रभाव का अध्ययन करना।
- राष्ट्रभावना और प्रेरणा में संगीत की भूमिका को पहचानना।
- संगीत की सामाजिक, शैक्षिक एवं सांस्कृतिक भूमिका का अध्ययन।
- मानव जीवन पर संगीत के मनोवैज्ञानिक प्रभावों का विश्लेषण।
- संगीत को आधारभूत आवश्यकता के रूप में स्थापित करना।

6.3 संगीत का मानव जीवन में महत्व

संगीत मानव जीवन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और अभिन्न हिस्सा है। यह केवल मनोरंजन का साधन नहीं है, बल्कि यह भावनाओं, मानसिक स्थिति, सामाजिक संपर्क, सांस्कृतिक पहचान और आध्यात्मिक अनुभवों को भी प्रभावित करता है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक समय तक, संगीत ने मानव जीवन में उल्लास, शांति और प्रेरणा का स्रोत प्रदान किया है। संगीत का प्रभाव हर आयु वर्ग पर पड़ता हैकृबच्चों की सीखने की क्षमता, युवाओं की मानसिक शक्ति, वयस्कों की सहनशीलता और वृद्धों की मानसिक शांति। इसलिए इसे मानव जीवन की आधारभूत आवश्यकता माना जा सकता है। संगीत मानव जीवन की वह सशक्त अभिव्यक्तिपूर्ण कला है, जो व्यक्ति के मन, विचार, व्यवहार और सामाजिक संरचना को प्रभावित करती है। समाज के इतिहास, परंपराओं, उत्सवों, धार्मिक अनुष्ठानों और सामाजिक गतिविधियों में संगीत का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। यह केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक एकता, सांस्कृतिक पहचान, सामूहिक भावनाओं और सामाजिक मूल्यों का वाहक है।

संगीत मानव समाज की एक प्राचीन और प्रभावशाली धरोहर है, जिसकी जड़ें मानव सभ्यता के आरंभिक विकास से ही जुड़ी हैं। यह केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि मानव जीवन के सामाजिक,

सांस्कृतिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक पक्षों को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख माध्यम है। विभिन्न सभ्यताओं, धर्मों, जातीय समूहों तथा सामाजिक समुदायों के विकास में संगीत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। सामाजिक जीवन की हर गतिविधिकृउत्सव, संस्कार, श्रम, आध्यात्मिकता तथा सामूहिक अभिव्यक्तिकृ संगीत के बिना अधूरी मानी जाती है।

यह अध्याय संगीत की सामाजिक प्रासंगिकता, उसके सामुदायिक कार्य, सामाजिक मूल्यों के निर्माण, संगीत मानव मन का स्वाभाविक आहार है। यह न केवल हमारी भावनाओं को अभिव्यक्त करता है, बल्कि सामाजिक जीवन में मानसिक संतुलन, सामूहिकता और सकारात्मक व्यवहार को भी विकसित करता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संगीत मानव मस्तिष्क और भावनाओं पर गहरा प्रभाव डालता है।

मानव जीवन के अस्तित्व के लिए रोटी, कपड़ा और मकान चिरकाल से मूलभूत आवश्यकताएं रही हैं। आधुनिक काल में मानव के लिए कला, शिक्षा, स्वास्थ्य देखरेख और सफाई भी उतनी ही आवश्यक हो गई हैं। हम जैसे–जैसे विकासशील देश से विकसित देश बनने की दिशा में प्रगति कर रहे हैं वैसे–वैसे ही हमारी बुनियादी जरूरतें भी बदलती जा रही हैं। हमारे दैनिक जीवन में संगीत की बहुत अहम भूमिका है। भारत की परंपरा बहुत समृद्ध रही है और देश के सभी भागों में संगीत और कला की विविध विधाएं

विकसित और पल्लवित होती रही हैं। इनमें से कई विधाएं तो वैदिक काल से चली आ रही हैं और अनेक विधाएं समय के साथ विकसित हुई हैं जबकि कुछ विधाएं समय बीतने के साथ विस्मृत हो चुकी हैं।

भार्तृहरि शतक के एक श्लोक की पहली पंक्ति है–

"साहित्यसंगीतकलाविहीनः साक्षात्पशुः पुच्छ विषाणहीनः।"

इसका भाव यह है कि साहित्य, संगीत और कलाओं की जानकारी से रहित मनुष्य बिना पूंछ और सींगों वाले पशु के समान ही होता है। ऐसे पशु को अपूर्ण ही माना–समझा जाएगा; इसी प्रकार साहित्य, संगीत और कलाओं का ज्ञान न रखने वाले व्यक्ति को ज्ञानी या विद्वान नहीं कहा जा सकता। शिक्षा के हर स्तर पर संगीत की विशेष भूमिका है। स्कूली शिक्षा के दौरान तो इसका महत्व और भी अधिक होता है। संगीत से बच्चों में अनुशासन आता है और लगन पैदा होती है सांस्कृतिक संरक्षण और सामूहिक चेतना पर इसके प्रभाव का विस्तार से अध्ययन प्रस्तुत करता है।

संगीत सीखने और संगीत का अभ्यास करने से बच्चों में समय का महत्व जानने और समय का प्रबंधन करने की क्षमता पनपती है जिससे उन्हें आवश्यक मुद्दों पर अधिक ध्यान देने की समझ आती है। जीवन के प्रारंभिक काल में ही इन मूल्यों का विकास होने से बच्चों को जीवन में आगे चलकर अनेकानेक लाभ प्राप्त होते हैं। यदि बच्चों में प्री–प्राइमरी या प्राइमरी–प्राथमिक पूर्व अथवा प्राथमिक स्तर पर इन गुणों का विकास हो जाए तो वे हाई–स्कूल में पढ़ाई–लिखाई का बोझ सहज ही सरलता से सह लेंगे और उस स्तर पर उनका प्रदर्शन निश्चय ही कहीं बेहतर होगा।

संगीत से बच्चों पर पाठ्यसामग्री का बोझ तो कम होता ही हैं, इससे उनके मन में उठ रहे द्वंद्व और विवाद भी शांत होने लगते हैं।

फिर, उन्हें संगीत के माध्यम से अपनी भावनाएं व्यक्त करने का अवसर मिल जाता है। संगीत के माध्यम से बच्चों में भावात्मक संतुलन आता है और सौंदर्य बोध की अभिव्यक्ति की क्षमता के विकास से उनमें सद्भाव जागृत हो जाता है। यदि ऐसे महत्वपूर्ण मोड़ पर संगीत को पाठ्यक्रम का विषय बना लिया जाए और बच्चे को उच्च शिक्षा के लिए संगीत को ही विषय चुनने का विकल्प मिल सके तो उनके लिए बहुत ही लाभप्रद सिद्ध होगा क्योंकि बाल्यकाल से ही संगीत सीखना शुरू कर देने से इसे कॉलेज की पढ़ाई से जोड़ना भी सहज हो जाएगा।

संगीत का अभ्यास करने और उसके सिद्धांतों का ज्ञान प्राप्त करने से दोनों क्षेत्रों को समान महत्व मिलेगा जो बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। वाद्य यंत्रों की कार्यप्रणाली के बारे में चर्चा से स्वर की संरचना को –

बारीकी से समझने में मदद मिलेगी और विद्यार्थियों में उसके प्रति रुचि एवं जिज्ञासा जागृत होगी। इससे संगीत की हमारी प्राचीन परंपराओं के बारे में ऐतिहासिक दृष्टिकोण विकसित होगा और साथ ही विद्यार्थी को विषय की भाषा और शब्दावली सीखने तथा संगीत की विभिन्न परिभाषाओं और उक्तियों को भली प्रकार जानने–समझने में भी सरलता होगी। इसी अवस्था में बच्चों में संगीत के सौंदर्य को परखने और उसे ग्रहण करने की उत्सुक्ता जगेगी जिससे उन्हें 'रागों' की विशेषताएं जानने और विभिन्न 'स्वरों' को गाकर या बजाकर उन्हें पहचानने की क्षमता विकसित करने में बड़ी सफलता मिल सकेगी। संगीत के सौंदर्य को समझकर उसे सराहने की क्षमता हासिल करने के लिए किसी उच्च कलाकार को सुनते रहना अत्यंत महत्वपूर्ण होता है और इसके लिए सिद्धहस्त गुरु के चरणों में बैठकर संगीत सुनने की कठिन साधना करनी पड़ती है। शास्त्रीय संगीत के प्रति मूल भाव विकसित करने के लिए 'सुर', 'स्वर' और 'संगीत रचनाओं' का अध्ययन सबसे ज़्यादा आवश्यक और महत्वपूर्ण होता है।

संगीत मानव संस्कृति का एक अभिन्न हिस्सा है। यह केवल कला का रूप नहीं बल्कि परम्पराओं, मान्यताओं और सामाजिक व्यवहारों का जीवंत दर्पण है। आदिम युग से लेकर आधुनिक सभ्यता तक, संगीत ने सांस्कृतिक निरंतरता को बनाए रखते हुए मानव जीवन को सौन्दर्य, ऊर्जा और एकता से जोड़ने का कार्य किया है। संगीत मानव संवेदनाओं की वह मधुर अभिव्यक्ति है, जो व्यक्ति के हृदय में न केवल भावनाओं का संचार करती है, बल्कि समाज और राष्ट्र के प्रति गहन निष्ठा, समर्पण और गौरव की भावना भी जगाती है। किसी भी राष्ट्र की सांस्कृतिक पहचान उसके संगीत में सुरक्षित रहती है। राष्ट्रीय गान, देशभक्ति गीत, लोकसंगीत, युद्धगीत और सांस्कृतिक संगीत परंपराएँ मिलकर नागरिकों के भीतर राष्ट्रीय भक्ति जागृत करती है।

6.1.1 संगीत का मानव जीवन में सामाजिक महत्व

संगीत मानव समाज की सामूहिक चेतना का सशक्त माध्यम है। यह व्यक्ति को समाज से जोड़ता है और सामाजिक जीवन को संतुलन, सौहार्द और एकता प्रदान करता है। सामाजिक दृष्टि से संगीत केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक मूल्यों, परंपराओं और मानवीय संबंधों को सुदृढ़ करने वाला तत्व है। संगीत विभिन्न वर्गों, जातियों और समुदायों को एक सूत्र में बाँधता है। सामूहिक गायन, लोकगीत, भजन, कीर्तन और राष्ट्रीय गीत सामाजिक एकता की भावना को प्रबल करते हैं। जन्म, विवाह, उत्सव, पर्व, धार्मिक अनुष्ठान और अंतिम संस्कार जैसे सामाजिक अवसरों पर संगीत अनिवार्य रूप से जुड़ा होता है। यह सामाजिक परंपराओं को जीवंत बनाए रखता है। संगीत के माध्यम से प्रेम, करुणा, वीरता, भक्ति

और उल्लास जैसी सामाजिक भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है। यह समाज के सामूहिक अनुभवों को स्वर देता है। सांस्कृतिक संरक्षण और पीढ़ीगत संवाद से लोक–संगीत और पारंपरिक गीतों के माध्यम से संस्कृति, इतिहास और सामाजिक मूल्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचते हैं। संगीत सामाजिक तनाव, हिंसा और मानसिक अशांति को कम करने में सहायक है। यह समाज में सहिष्णुता और मानवीय संवेदनाओं को बढ़ाता है। श्रमगीत, लोकधुनें और सामूहिक वादन कार्यस्थलों पर ऊर्जा, सहयोग और उत्साह उत्पन्न करते हैं, जिससे सामाजिक सहयोग बढ़ता है।

राष्ट्रभावना और सामाजिक चेतना देशभक्ति गीत, राष्ट्रीय गान और प्रेरक रचनाएँ समाज में राष्ट्रप्रेम, कर्तव्यबोध और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित करती हैं। संगीत सामाजिक भेदभाव को कम करता है और समावेशी समाज के निर्माण में सहायक होता है।

6.1.2 संगीत का मानव जीवन में मनोवैज्ञानिक महत्व

संगीत मानव मन और मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव डालने वाली कला है। यह भावनाओं, विचारों और व्यवहार को संतुलित कर मानसिक स्वास्थ्य को सुदृढ़ बनाता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संगीत न केवल मनोरंजन है, बल्कि एक प्रभावी उपचारात्मक और विकासात्मक माध्यम भी है। संगीत के माध्यम से व्यक्ति अपने हर्ष, विषाद, प्रेम, करुणा, क्रोध और उल्लास जैसी भावनाओं को सहज रूप से व्यक्त कर सकता है। इससे भावनात्मक दमन कम होता है। संगीत तनाव, चिंता और अवसाद को कम करने में सहायक होता है। मधुर और शांत संगीत मन को शांति प्रदान करता है और मानसिक संतुलन बनाए रखता है। संगीत मस्तिष्क की सक्रियता बढ़ाता है, जिससे स्मरण शक्ति, ध्यान और एकाग्रता में वृद्धि होती है। विद्यार्थियों के लिए यह विशेष रूप से लाभकारी है। गायन, वादन और ताल अभ्यास से व्यक्ति में आत्मविश्वास बढ़ता है और आत्म–अभिव्यक्ति की क्षमता विकसित होती है। संगीत–चिकित्सा का प्रयोग मानसिक रोगों, अनिद्रा, तनाव और भावनात्मक विकारों के उपचार में किया जाता है। संगीत अनुशासन, धैर्य, संवेदनशीलता और रचनात्मकता को बढ़ाता है, जिससे संतुलित व्यक्तित्व का निर्माण होता है। बाल्यावस्था में संगीत सीखने से भावनात्मक स्थिरता, सामाजिक व्यवहार और बौद्धिक विकास होता है।

संगीत वृद्ध व्यक्तियों को मानसिक शांति, स्मृतियों के संचार और एकाकीपन से मुक्ति दिलाने में सहायक होता है।

संगीत मानव सभ्यता की प्राचीन धरोहर है। भारत में वैदिक परंपरा, सामवेद, लोक–संगीत और शास्त्रीय संगीत ने सांस्कृतिक निरंतरता बनाए रखी है। समय के साथ अनेक विधाएँ विकसित हुईं, कुछ विस्मृत हुईं, पर संगीत की केंद्रीय भूमिका बनी रही। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संगीत मानव मस्तिष्क और भावनाओं

पर गहरा प्रभाव डालता है। यह मानसिक संतुलन, तनाव–नियंत्रण और सकारात्मक व्यवहार को बढ़ावा देता है। संगीत मानव मन का स्वाभाविक आहार है, जो भावनात्मक अभिव्यक्ति और आंतरिक शांति प्रदान करता है।

6.1.3 संगीत का मानव जीवन में सांस्कृतिक महत्व

संगीत मानव संस्कृति का अभिन्न और जीवंत अंग है। यह किसी भी समाज की परंपराओं, मान्यताओं, जीवन–शैली और सांस्कृतिक पहचान को अभिव्यक्त करता है। आदिम युग से आधुनिक युग तक संगीत ने सांस्कृतिक निरंतरता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। किसी भी समाज या राष्ट्र की सांस्कृतिक पहचान उसके संगीत में सुरक्षित रहती है। लोक–संगीत, शास्त्रीय संगीत और धार्मिक संगीत उस समाज की आत्मा को प्रतिबिंबित करते हैं। विवाह गीत, संस्कार गीत, पर्व–त्योहारों के गीत और लोकधुनें पीढ़ी–दर–पीढ़ी सांस्कृतिक परंपराओं को जीवित रखती हैं। लोक–संगीत जनजीवन, श्रम, प्रकृति और सामाजिक अनुभवों से जुड़ा होता है। यह स्थानीय संस्कृति और भाषा के संरक्षण में सहायक है। भजन, कीर्तन, सूफी संगीत, गुरबाणी और स्तुति–गान धार्मिक एवं आध्यात्मिक संस्कृति को सुदृढ़ करते हैं और आस्था को गहराई प्रदान करते हैं। संगीत विभिन्न संस्कृतियों के बीच संवाद स्थापित करता है। भारतीय संगीत में विविधता होते हुए भी एकता का भाव दिखाई देता है। नृत्य, संगीत समारोह, सांस्कृतिक महोत्सव और मेलों में संगीत सामूहिक आनंद और सांस्कृतिक चेतना को बढ़ाता है। प्राचीन ग्रंथों, रागों और परंपराओं के माध्यम से संगीत इतिहास और संस्कृति की अमूल्य धरोहर को सुरक्षित रखता है।

6.1.4 संगीत का मानव जीवन में राष्ट्रभावना से संबंधित महत्व

संगीत राष्ट्रभावना को जागृत करने का अत्यंत प्रभावशाली माध्यम है। यह व्यक्ति में देश के प्रति प्रेम, निष्ठा, त्याग और समर्पण की भावना उत्पन्न करता है। स्वतंत्रता आंदोलन से लेकर आधुनिक भारत तक, संगीत ने जनमानस को राष्ट्र के प्रति एकजुट करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। संगीत विभिन्न भाषाओं, धर्मों और क्षेत्रों के लोगों को एक सूत्र में बाँधता है। राष्ट्रीय गान और देशभक्ति गीत सामूहिक रूप से गाए जाने पर एकता की अनुभूति कराते हैं। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान देशभक्ति गीतों ने जनसामान्य में उत्साह, साहस और बलिदान की भावना जगाई। 'वंदे मातरम्' और 'सारे जहाँ से अच्छा' जैसे गीतों ने राष्ट्रीय चेतना को प्रखर किया। राष्ट्रीय गान देश की अस्मिता और सम्मान का प्रतीक है। इसके गायन से नागरिकों में अनुशासन, सम्मान और राष्ट्र के प्रति श्रद्धा का भाव विकसित होता है। सेना, परेड और युद्ध–गीतों में प्रयुक्त संगीत वीरता, साहस और कर्तव्यनिष्ठा की भावना को प्रबल करता है।

भारत जैसे बहुसांस्कृतिक राष्ट्र में संगीत विविधताओं को जोड़कर राष्ट्रीय समरसता को सुदृढ़ करता है। देशभक्ति गीत, प्रेरक संगीत और सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ युवाओं में राष्ट्र के प्रति जिम्मेदारी और जागरूकता उत्पन्न करती हैं। स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस और अन्य राष्ट्रीय पर्वों पर संगीत कार्यक्रम राष्ट्रीय गौरव और सामूहिक उत्साह को बढ़ाते हैं। अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भारतीय संगीत देश की सांस्कृतिक पहचान और राष्ट्र की गरिमा को प्रतिष्ठित करता है।

6.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप यह जान चुके होंगे कि संगीत केवल ध्वनि या सुरों का समूह नहीं है, बल्कि यह मानव जीवन के हर पहलू को प्रभावित करता है। सामाजिक संबंध, मानसिक स्वास्थ्य, सांस्कृतिक पहचान, राष्ट्रप्रेम और आध्यात्मिक उन्नति में इसका महत्व अमूल्य है। संगीत मानव जीवन को सुंदर, सार्थक और प्रेरणादायक बनाता है। संगीत मानव जीवन में केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि राष्ट्रभावना का अत्यंत शक्तिशाली स्रोत है। यह राष्ट्रीय एकता, सामूहिक पहचान, देशप्रेम, सांस्कृतिक गौरव और इतिहास को जोड़कर नागरिकों को राष्ट्र के प्रति समर्पित होने की प्रेरणा देता है। इसलिए कहा जाता है कि "संगीत केवल स्वर नहीं, बल्कि राष्ट्र की आत्मा है। संगीत मानव सामाजिक जीवन के प्रत्येक पहलू को प्रभावित करता है। यह सामाजिक एकता का माध्यम, सांस्कृतिक परंपराओं का आधार, भावनात्मक संतुलन का साधन और सामाजिक मूल्यों का संवाहक है। संगीत समाज की संवेदनशीलता, सामूहिकता और सौहार्द को बढ़ाकर उसे अधिक सभ्य और समृद्ध बनाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि संगीत मानव समाज का आधारदृस्तम्भ है, जिसके बिना सामाजिक जीवन की परिकल्पना अधूरी है।

संगीत मानव संस्कृति का जीता–जागता आधार है। यह न केवल मनोरंजन का माध्यम है, बल्कि सांस्कृतिक पहचान, परम्परा, आध्यात्मिकता, एकता और विविधता को संरक्षित करने वाला सशक्त उपकरण भी है। संगीत के बिना मानव संस्कृति अधूरी है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संगीत मनुष्य के मानसिक स्वास्थ्य, भावनात्मक संतुलन, सामाजिक सामंजस्य, व्यक्तित्व विकास और कार्यक्षमता को प्रभावित करता है। यह न केवल मन को शांत करता है, बल्कि सामाजिक जीवन में सामूहिक भावनाओं और सकारात्मक व्यवहार को भी बढ़ाता है। इसलिए संगीत मानव सामाजिक जीवन में एक मनोवैज्ञानिक सहारा और मानसिक ऊर्जा का स्रोत है।

6.8 शब्दावली

संगीतः स्वर, लय और ताल के संयोजन से उत्पन्न कला, जो भावों की अभिव्यक्ति करती है।

स्वरः संगीत की मूल ध्वनि इकाई, जिससे राग की रचना होती है।

लयः समय के प्रवाह में गति और ठहराव का संतुलन।

तालः मात्राओं का निश्चित चक्र, जो संगीत को संरचना देता है।

रागः निश्चित स्वर–संरचना और भावात्मक स्वरूप वाला संगीतात्मक ढांचा।

शास्त्रीय संगीतः शास्त्रों और परंपराओं पर आधारित सुव्यवस्थित संगीत प्रणाली।

लोक–संगीतः जनजीवन से जुड़ा, क्षेत्रीय परंपराओं पर आधारित संगीत।

सामवेदः वेदों में वह ग्रंथ, जिसमें गायनात्मक मंत्रों का संकलन है।

श्रवण–साधनाः गुरु के सान्निध्य में संगीत सुनकर सीखने की प्रक्रिया।

सौंदर्य–बोधः कला के सौंदर्य को समझने और अनुभव करने की क्षमता।

भावात्मक संतुलनः भावनाओं का संतुलित और सकारात्मक नियमन।

राष्ट्रभावनाः राष्ट्र के प्रति निष्ठा, गर्व और समर्पण की चेतना।

सांस्कृतिक विरासतः पीढ़ी–दर–पीढ़ी संचित कला, परंपराएँ और मूल्य।

6.9 अभ्यास प्रश्न

क. लघु उत्तरीय प्रश्न :–

1. गीत गोविन्द पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
2. मानसिंह तोमर काल में संगीत की स्थिति को संक्षेप में समझाइए।
3. आधुनिक कालीन प्रसिद्ध संगीत ग्रंथों के नाम बताइए।
4. उस्ताद अलाउद्दीन खां के सांगीतिक योगदान को बताइए।

ख. सत्य/असत्य बताइए :–

1. मैरिस म्यूजिक कॉलेज इलाहाबाद में स्थित है।
2. अभिनव राग मंजरी के रचयिता पं.वि.दिगम्बर पुलस्कर हैं।
3. भक्ति आंदोलन के प्रचारकों में सूरदास प्रमुख थे।
4. तानसेन द्वारा राग मियां की सारंग की रचना हुई।

ग. रिक्त स्थान की पूर्ति :–

1. संगीत दर्पण ग्रंथ के लेखक _____ हैं।
2. गीत गोविन्द की रचना _____शताब्दी में हुई।
3. सर्वप्रथम सन् _____ में लाहौर गन्धर्व महाविद्यालय की स्थापना हुई।
4. पं.ओमकार नाथ ठाकुर को सन् _____में पद्मश्री से सम्मानित किया गया।**1.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर**

ख. सत्य/असत्य बताइए :–

- संगीत केवल मनोरंजन का साधन है। (असत्य)
- संगीत सामाजिक एकता को सुदृढ़ करता है। (सत्य)
- सामवेद का संबंध संगीत से नहीं है। (असत्य)
- संगीत बच्चों में अनुशासन और समय–प्रबंधन विकसित करता है। (सत्य)
- संगीत का मानव मन पर कोई मनोवैज्ञानिक प्रभाव नहीं पड़ता। (असत्य)

ग. रिक्त स्थान की पूर्ति :–

- संगीत मानव जीवन की एक –––––––––– आवश्यकता है। (आधारभूत)
- –––––––––– काल से भारतीय संगीत परंपरा चली आ रही है। (वैदिक)
- भार्तृहरि ने –––––––––– शतक में साहित्य और संगीत का महत्व बताया है। (नीति)
- राग और स्वर का अध्ययन –––––––––– संगीत का आधार है। (शास्त्रीय)
- राष्ट्रीय गान और देशभक्ति गीत –––––––––– भावना को जागृत करते हैं। (राष्ट्र)

6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- शारंगदेव – संगीत रत्नाकर
- पं. विष्णु नारायण भातखंडे – हिंदुस्तानी संगीत पद्धति
- डॉ. प्रेमलता शर्मा – भारतीय संगीत का इतिहास
- भार्तृहरि – नीति शतक
- आचार्य बृहस्पति – भारतीय संगीत चिंतन

6.11 सहायक/उपयोगी पाठ्य सामग्रीः

- भार्तृहरि – नीति शतक

- आचार्य बृहस्पति – भारतीय संगीत चिंतन

6.12 निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. संगीत का मानव जीवन के सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में योगदान स्पष्ट कीजिए।

प्रश्न 2. शिक्षा और मनोविज्ञान के क्षेत्र में संगीत की भूमिका का विवेचन कीजिए।